चौथी दुनिया

www.chauthiduniya.com

मूल्य 5 रुपये

हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

1986 से प्रकाशित | 30 जनवरी- 05 फरवरी 2017 | नई दिल्ली | हर शुक्रवार को प्रकाशित | Postal Regn. No. DL (ND)-11/6139/2015-17, RNI No. DELHIN/2009/30467

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2017

चौथी दुनिया का सर्वे

मायावती सबसे आगे

चौथी दुनिया ब्यूरो

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव हमेशा देश का सबसे महत्वपूर्ण चुनाव रहा है. यहां अलग-अलग चुनावी समीकरण बन रहे हैं. मायावती क्या फिर से वापस आ पाएंगी? समाजवादी पार्टी और कांग्रेस के गठबंधन को क्या बहुमत मिलेगा? भारतीय जनता पार्टी लोकसभा की तरह उत्तर प्रदेश में प्रदर्शन करेगी? मुस्लिम वोटबैंक का क्या होगा? असदुद्दीन ओवैसी की पार्टी का चुनाव पर क्या असर होगा? ऐसे कई सवाल हैं, जो उत्तर प्रदेश के चुनावी नतीजे पर असर डालेंगे. उत्तर प्रदेश का चुनाव जटिलतम होने के साथ-साथ भविष्य की राजनीति का रास्ता निर्धारित करने वाला साबित होगा. विजेता कौन होगा, यह तो नतीजा आने के बाद ही पता चलेगा, लेकिन हर कोई यह जानने के लिए उत्सुक है कि चुनाव का नतीजा आख़िर होगा क्या? उत्तर प्रदेश की राजनीति में पिछले कुछ महीनों में काफी उठापटक हुई है. समाजवादी पार्टी की अंतर्कलह, बसपा के कई नेताओं का पार्टी छोड़ना, कांग्रेस पार्टी को मजबूत करने के लिए राहुल की पहल, साथ ही भारतीय जनता पार्टी के अंदर नेताओं के बीच घमासान आदि जैसी घटनाओं ने उत्तर प्रदेश के चुनाव को और भी रोचक बना दिया है.

चुनाव से पहले मीडिया द्वारा प्रसारित एवं प्रचारित चुनावी सर्वे ने भ्रम की स्थिति पैदा कर दी है. हर नया सर्वे एक नए पैंतरे के साथ लोगों को भ्रमित करने में सफल रहा है. हैरानी तो यह है कि हर सर्वे के नतीजे अलग-अलग हैं. कोई सर्वे मायावती की सरकार बना रहा है, तो कोई यह दावा कर रहा है कि अखिलेश यादव फिर से मुख्यमंत्री बन जाएंगे. कुछ सर्वे ऐसे भी हैं, जो भारतीय जनता पार्टी को बहुमत का दावा कर रहे हैं. अब अगर अलग-अलग सर्वे अलग-अलग नतीजे दे रहे हैं, तो इसका पहला मतलब तो यही है कि उत्तर प्रदेश की जनता ने अभी तक यह फैसला नहीं लिया है कि वो किसकी सरकार बनाएंगे. यही वजह है कि उत्तर प्रदेश का चुनाव सबसे दिलचस्प मोड़ पर पहुंच गया है. ऐसे में यह जानना जरूरी है कि उत्तर प्रदेश की जनता का मूड क्या है? मुख्यमंत्री पद की दौड़ में सबसे आगे कौन है? उत्तर प्रदेश में इस बार चुनाव का मुख्य मुद्दा क्या होगा? वर्तमान सरकार के कामकाज से जनता कितनी संतुष्ट है? ऐसे कई सवाल हैं, जिन पर जनता की राय जानने के लिए चौथी दुनिया ने उत्तर प्रदेश में एक सर्वे किया. इस सर्वे का मकसद ये जानना नहीं है कि किस पार्टी को कितना वोट मिलेगा और कितने सीटें आएंगी, बल्कि हमने अलग-अलग राजनीतिक मुद्दों पर जनता के मूड को समझने की कोशिश की है.

चौथी दुनिया का यह सर्वे 14 से 18 जनवरी, 2017 के बीच किया गया. इस दौरान हमारी टीम राज्य के अलग-अलग विधानसभा क्षेत्रों के मतदाताओं से मिली और उनसे विभिन्न मुद्दों से जुड़े सवाल-जवाब किए. मतदाताओं के जवाबों को ही हमने अपने सर्वे के आधारभूत आंकड़ों के रूप में इस्तेमाल किया. इसके अलावा पिछले चुनावों में मतदाताओं के वोटिंग पैटर्न और चुनाव आयोग के आंकड़ों की भी मदद ली गई. सर्वे में सैंपल के लिए हमने मल्टीस्टेज स्ट्रेटीफाइड रैंडम सैंपलिंग तकनीक की मदद ली. सर्वे के दौरान हमने इस बात का खास ध्यान रखा कि राज्य के सभी हिस्सों के मतदाताओं के मिजाज को अहमियत मिले. इनमें महिलाएं, युवा, दलित, महादलित, अल्पसंख्यक, पिछड़ा वर्ग और सवर्ण आदि सभी शामिल थे. इस सर्वे में हमने हर लोकसभा क्षेत्र के दो विधानसभा में किया. मतलब यह कि इस सर्वे के लिए 160 विधानसभा क्षेत्रों में 16,000 लोगों से सवाल पूछे गए. सैंपल का साइज और तकनीक देखते हुए कहा जा सकता है कि यह सर्वे आम चुनावी सर्वे से ज़्यादा विश्वसनीय और तार्किक है.

हमने गहन विचार-विमर्श के बाद तय किया कि इस सर्वे में यह बताना उचित नहीं होगा कि किस पार्टी या गठबंधन को कितनी सीटें मिलेंगी. इसकी वजह यह है कि चुनाव में अभी काफी वक्त है. इस सर्वे के पीछे हमारा मकसद था, उत्तर प्रदेश की जनता का मिजाज यानी मूड का आकलन करने की कोशिश. इस सर्वे के ज़रिए हमने यह पता करने की कोशिश की है कि मूल राजनीतिक सवालों पर उत्तर प्रदेश की जनता क्या सोच रही है. इस सर्वे में यह समझने की कोशिश की गई है कि चुनाव से पहले हुई राजनीतिक उठापटक का जनता पर क्या असर पड़ा है. यह सर्वे उत्तर प्रदेश की राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक स्थति और वर्तमान घटनाओं पर जनता की समग्र राय प्रस्तुत करता है.

चौथी दुनिया के इस सर्वे के (शेष पृष्ठ 2 पर)

चौथी दुनिया का यह सर्वे 14 से 18 जनवरी, 2017 के बीच किया गया. इस दौरान हमारी टीम राज्य के अलग-अलग विधानसभा क्षेत्रों के मतदाताओं से मिली और उनसे विभिन्न मुद्दों से जुड़े सवाल-जवाब किए. मतदाताओं के जवाबों को ही हमने अपने सर्वे के आधारभूत आंकड़ों के रूप में इस्तेमाल किया. इसके अलावा पिछले चुनावों में मतदाताओं के वोटिंग पैटर्न और चुनाव आयोग के आंकड़ों की भी मदद ली गई.

मुख्यमंत्री की पहली पसंद कौन हैं?

जब हमने ये सवाल उत्तर प्रदेश की जनता से पूछा, तब ज्यादातर ने मुख्यमंत्री पद के लिए मायावती का नाम लिया. ऐसे लोगों का मानना था कि मायावती के शासन में अपराध पर नियंत्रण रहता है. इसके ठीक बाद, अखिलेश यादव का नाम लोगों ने लिया. चूंकि, भाजपा की तरफ से सीएम पद के लिए किसी को प्रोजेक्ट नहीं किया गया है, इसलिए भाजपा के नेताओं के नाम पर लोगों की राय बंटी हुई नजर आई. 11 फीसदी लोगों ने राजनाथ सिंह का नाम लिया, 7 फीसदी लोगों ने योगी आदित्यनाथ के नाम पर मुहर लगाई. अन्य में 15 फीसदी हैं, जिसमें भाजपा के ही केपी मौर्या, वरुण गांधी का नाम शामिल है. इसमें मुलायम सिंह यादव, शिवपाल यादव, शीला दीक्षित के नाम भी शामिल हैं.■

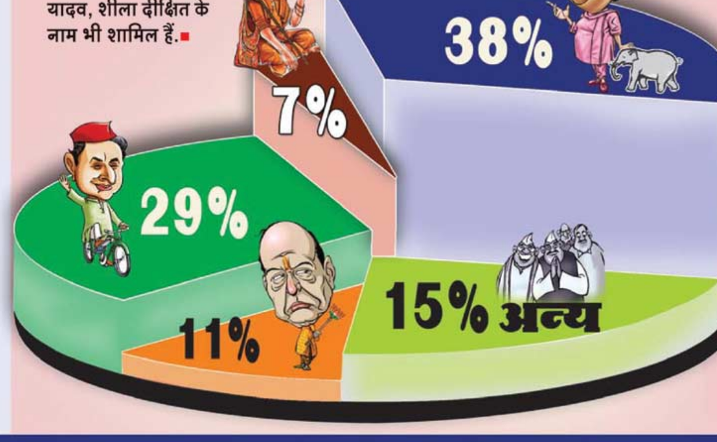

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2017

मायावती सबसे आगे

पृष्ठ 1 का शेष

मुताबिक, आज के माहौल में मायावती उत्तर प्रदेश की पहली पसंद हैं. उनकी सीधी लड़ाई समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष और वर्तमान मुख्यमंत्री अखिलेश यादव से है. उत्तर प्रदेश में ऐसा कोई भी नेता नहीं है, जो इन दोनों के मुकाबले के बीच अपनी मौजूदगी दर्ज करा सके. मायावती मुख्यमंत्री की रेस में सबसे आगे हैं. उनके सबसे आगे होने की वजह उनकी एक सख्त प्रशासक की छवि है. उत्तर प्रदेश की जनता को लगता है कि यहां की सबसे बड़ी समस्या चरमराती कानून-व्यवस्था है. लोग चाहते हैं कि अगली सरकार ऐसी हो, जो कानून-व्यवस्था को दुरुस्त कर सके और इसके लिए उन्हें लगता है कि मायावती सबसे उपयुक्त हैं. मायावती के लिए अच्छी खबर यह है कि इस सर्वे के दौरान अल्पसंख्यकों का झुकाव बसपा की तरफ नजर आया. पश्चिम उत्तर प्रदेश में अल्पसंख्यकों के दिमाग में आज भी मुजफ्फरनगर के दंगों की यादें ताजा हैं. उन्हें लगता है कि राज्य सरकार ने दंगों के दौरान सही तरीके से अपना दायित्व नहीं निभाया. यही वजह है कि इस सर्वे के दौरान ज्यादातर अल्पसंख्यकों ने मायावती के शासन में खुद को ज्यादा सुरक्षित महसूस करने की (शेष पृष्ठ 3 पर)

क्या आप अखिलेश सरकार के कामकाज से संतुष्ट हैं?

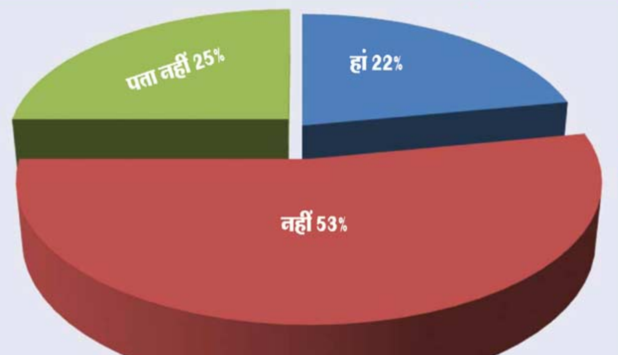

इसके जवाब में लोगों ने माना कि वे अखिलेश यादव की सरकार से संतुष्ट नहीं हैं. जाहिर है, आमतौर पर लोग 5 साल होते-होते सरकार के कामकाज से असंतुष्ट हो ही जाते हैं. चुनाव से पूर्व समाजवादी पार्टी के भीतर जो तमाशा हुआ, उसे लेकर भी जनता का एक वर्ग नाखुश दिखा. इसका भी असर जवाब पर पड़ा. लोगों में असंतोष की भावना सर्वाधिक कानून और व्यवस्था के मोर्चे पर दिखी. लोगों ने कहा कि सरकार इस मोर्चे पर ठीक से काम नहीं कर सकी. वैसे भी उत्तर प्रदेश में एक आम धारणा है कि समाजवादी पार्टी की सरकार में गुंडागर्दी बढ़ जाती है. जिन 22 फीसदी लोगों ने अखिलेश सरकार के कामकाज के प्रति संतोष दिखाया, वे इस बात से खुश नजर आए कि अखिलेश सरकार ने सड़क आदि को बेहतर बनाने का काम किया और उनकी छवि एक स्वच्छ नेता की है. इनलोगों का मानना था कि अखिलेश यादव और भी बेहतर कर सकते थे, यदि वे अपनी सरकार के शुरुआती कार्यकाल में पार्टी के बड़े नेताओं के दबाव में नहीं आते. ■

इस चुनाव का मुख्य मुद्दा क्या है?

इस सवाल के जवाब में एक बार फिर यही तथ्य उभर कर सामने आया कि कानून-व्यवस्था यूपी का एक महत्वपूर्ण मुद्दा है. 32 फीसदी लोगों ने माना कि इस चुनाव में कानून व्यवस्था का मुद्दा ही हावी रहेगा. इसके बाद लोगों ने भ्रष्टाचार को एक बड़ा मुद्दा माना. महंगाई 15 फीसदी के साथ तीसरे नंबर पर रही. दिलचस्प रूप से सिर्फ 11 फीसदी लोगों ने माना कि रोजगार चुनाव का मुख्य मुद्दा बनेगा. ऐसे में सवाल उठता है कि क्या वाकई रोजगार कोई ऐसा मुद्दा नहीं है, जो चुनाव को प्रभावित कर सके. दरअसल, पिछले 15-20 साल में ऐसा हुआ है कि सरकारी नौकरियों की संख्या लगातार घटती गई है. केंद्र से लेकर राज्य सरकारों में लाखों पद रिक्त पड़े हैं. सरकारी नौकरी पाना आज किसी महान उपलब्धि से कम नहीं है. ऐसे में समाज का एक बड़ा तबका यह मान कर चल रहा है कि रोजगार के लिए उसे खुद पर ही निर्भर रहना है, या तो प्राइवेट नौकरी करनी है या कोई स्वरोजगार करना है. बिहार और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में यह प्रवृति बढ़ी है. शायद इसी का नतीजा है कि अब आम आदमी सरकार से बहुत अधिक रोजगार की उम्मीद नहीं करते. इसके बाद सड़क और बिजली को क्रमश: 8 और 7 फीसदी लोगों का समर्थन मिला और दोनों को मिला दें तो यह रोजगार से अधिक होता है. यानी, यहां भी समझा जा सकता है कि लोग अब सड़क और बिजली मिल जाने को ही असल विकास मान रहे हैं. ■

किस पार्टी की सरकार में क़ानून व्यवस्था बेहतर होती है?

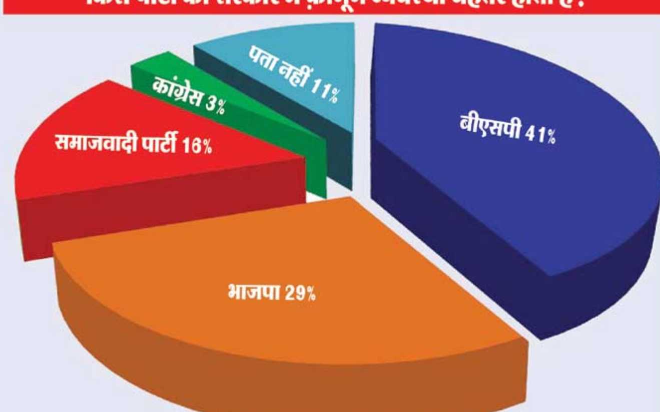

जब हमने लोगों से यह सवाल पूछा तो तकरीबन एक सुर में लोगों ने बहुजन समाज पार्टी का नाम लिया. 41 फीसदी के साथ बीएसपी पहले नंबर पर रही. बहुत हद तक यह सही भी है. उत्तर प्रदेश के लोगों के मन में यह आम धारणा है कि मायावती सत्ता में होती हैं, तो गुंडागर्दी खत्म हो जाती है. मायावती ने अपने फैसलों से इस बात को साबित भी किया है. अपने शासन के दौरान मायावती ने कई बाहुबली नेताओं को जेल भेजा और उनकी हरकतों पर लगाम लगाया है. इसी का नतीजा रहा कि लोगों ने इस सवाल के जवाब में सबसे अधिक बसपा को पसंद किया. ■

चौथी दुनिया
हिंदी का पहला साप्ताहिक अख़बार

वर्ष 08 अंक 48
30 जनवरी- 05 फरवरी 2017
RNI-DELHIN/2009/30467

संपादक
संतोष भारतीय
संपादक समन्वय
डॉ. मनीष कुमार
एडिटर (इंवेस्टिगेशन)
प्रभात रंजन दीन
सहायक संपादक
सरोज कुमार सिंह (बिहार-झारखंड)
सरयू भवन, वेस्ट बोरिंग केनाल रोड,
हरीलाल स्वीट्स के निकट, पटना-800001
फोन: 0612 3211869, 09431421901

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210-211 सेक्टर 63 नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के- 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय
के-2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001
कैंप कार्यालय एफ-2, सेक्टर -11, नोएडा, गौतमबुद्ध नगर उत्तर प्रदेश-201301

फोन न.

संपादकीय	0120-6451999
	6450888
विज्ञापन व प्रसार	022-65500786
	+91-8451050786
	+91-9266627379
फैक्स न.	0120-2544378

पृष्ठ-16++ (बिहार-झारखंड, उत्तर प्रदेश-उत्तराखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुन: प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

किसके शासन में अल्पसंख्यक सुरक्षित महसूस करते हैं?

यह सवाल सिर्फ अल्पसंख्यकों से पूछा गया था. इस सवाल के जवाब में 43 फीसदी लोगों ने माना कि बसपा के शासन में अल्पसंख्यक समुदाय सबसे अधिक सुरक्षित महसूस करता है. इसके पीछे उनका तर्क ये था कि जब राम जन्मभूमि विवाद पर हाई कोर्ट का फैसला आया था, तो यह अंदेशा था कि यूपी में माहौल खराब हो सकता है लेकिन तत्कालीन मुख्यमंत्री मायावती ने पूरे यूपी में एक पत्ता तक नहीं हिलने दिया था. यह भी उनके भरोसे की एक बड़ी वजह है. इन लोगों का ये भी मानना था कि बसपा के शासन में दंगे नहीं होते और अगर कोई ऐसी घटना हुई, तो उसे मायावती काफी कड़ाई से रोकती हैं. इसके बाद लोगों ने सपा को पसंद किया. ■

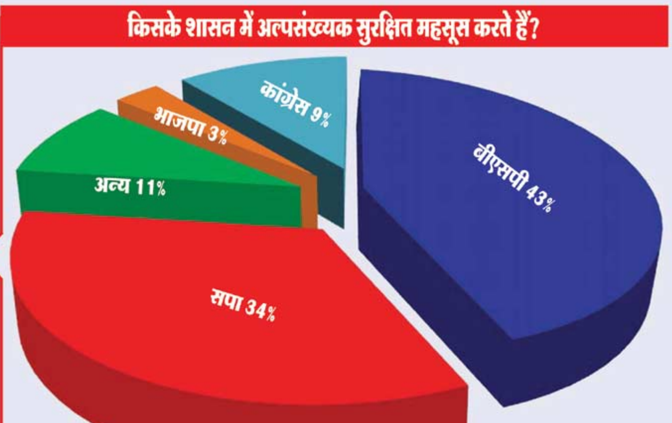

उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव 2017

मायावती सबसे आगे

पृष्ठ 2 का शेष

बात मानी. मुख्यमंत्री का चेहरा, अल्पसंख्यकों का भरोसा, समाजवादी पार्टी की पारिवारिक कलह और नोटबंदी से फैली नाराजगी की वजह से उत्तर प्रदेश में बहुजन समाज पार्टी और मायावती के लिए अनुकूल राजनीतिक माहौल है.

यहां ये बताना जरूरी है कि सर्वे के दौरान लोग व्यक्तिगत रूप से अखिलेश यादव के कामकाज और व्यवहार से नाराज नहीं दिखे, लेकिन उनके सरकार के कामकाज को लेकर असंतुष्ट नजर आए. इस सर्वे से ये नतीजा निकला है कि समाजवादी पार्टी को सबसे बड़ा नुकसान पारिवारिक कलह की वजह से हुई है. इस सर्वे के मुताबिक ज्यादातर लोगों को लगता है कि शिवपाल-अखिलेश की लड़ाई की वजह से समाजवादी पार्टी को काफी नुकसान होगा. हैरानी की बात ये है कि इस सर्वे में ज्यादातर लोग ये मानते हैं कि अखिलेश ने अपने चाचा शिवपाल यादव से लड़ाई कर के गलती की है. अखिलेश यादव के शासनकाल की सबसे बड़ी कमी यह रही है कि वो राज्य में कानून-व्यवस्था को ठीक ढंग से चला नहीं सके. इस सर्वे के दौरान लोगों ने ये भी माना कि कांग्रेस के साथ गठबंधन करने से समाजवादी पार्टी को फायदा होगा. अब ये देखना महत्वपूर्ण होगा कि क्या ये फायदा इतना बड़ा होगा कि चुनाव में मायावती को पीछे छोड़ सकें.

बिना किसी मुख्यमंत्री के चेहरे के चुनाव में जाना भारतीय जनता पार्टी के लिए महंगा पड़ सकता है. भारतीय जनता पार्टी को नोटबंदी की वजह से फैली नाराजगी का भी शिकार होना पड़ सकता है. सर्वे के दौरान पता चला कि ग्रामीण इलाकों में नोट की कमी की वजह से लोगों को काफी परेशानी हुई और अब तक स्थिति नहीं सुधरी है, इसलिए यह नाराजगी चुनाव पर असर छोड़ सकती है. इस सर्वे में हमने मतदाताओं से कुल 10 सवाल पूछे. ऐसे सवाल, जिनका सीधा असर मतदान पर होता है. चौथी दुनिया के सर्वे का नतीजा आपके सामने है. कुछ दिनों के बाद इन नतीजों में क्या बदलाव होता है, उसके बारे में भी हम आपको अपनी वेबसाइट www.chauthiduniya.com पर अपडेट करते रहेंगे. ■

feedback@chauthiduniya.com

क्या चुनाव में नोटबंदी का फ़ायदा भाजपा को होगा?

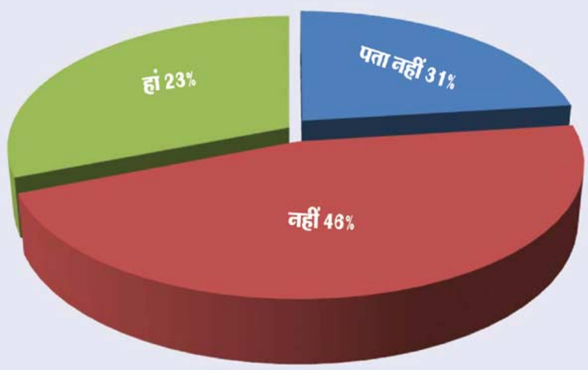

इस सवाल के जवाब में 46 फीसदी लोगों ने माना कि फायदा नहीं होगा. खास बात ये रही कि ऐसा मानने वाले लोग ग्रामीण पृष्ठभूमि के थे, जबकि जिन 23 फीसदी लोगों ने माना कि फायदा होगा, वे शहरी क्षेत्र से आते थे. यह सवाल भी कुछ इस तरह से था, जिसमें बड़ी संख्या यानी 31 फीसदी लोगों ने कहा कि उन्हें नहीं पता कि फायदा होगा या नहीं. इन जवाबों से यह बात स्पष्ट हुई कि नोटबंदी का फायदा भाजपा को जिस स्तर पर होने की उम्मीद थी, वो शायद पूरी न हो पाए. ■

क्या शिवपाल यादव से लड़कर अखिलेश ने ग़लती की?

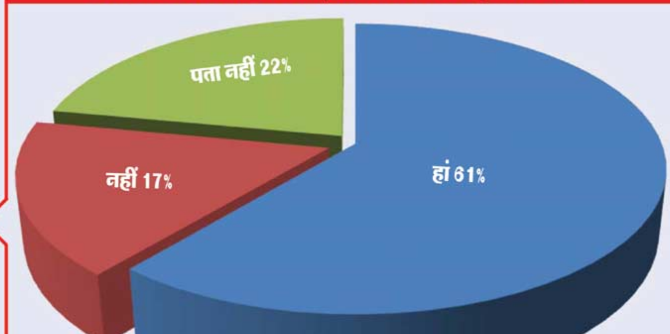

इसका जवाब काफी दिलचस्प रहा. 61 फीसदी लोगों ने माना कि हां अखिलेश ने गलती की और उन्हें इसका नुकसान उठाना पड़ सकता है. हालांकि, ऐसा मानने वाले लोगों के आयु समूह पर गौर किया जाए, तो 40 साल की उम्र से अधिक आयु के लोगों ने इस बात को माना कि अखिलेश ने गलती की. वहीं, युवा वर्ग में अधिकतर ऐसे लोग थे, जिन्होंने माना कि गलती नहीं की. ■

क्या पारिवारिक झगड़े से समाजवादी पार्टी को नुक़सान हुआ है?

यदि किसी राजनीतिक दल में आपसी झगड़े सार्वजनिक हो जाते हैं, तो यह हमेशा देखा गया है कि उस पार्टी को उसका नुकसान उठाना पड़ता है. हालिया दिनों में भी दिल्ली विधानसभा चुनाव में भाजपा के आंतरिक झगड़े उभर कर लोगों के सामने आए थे. हालांकि पार्टी की हार के और भी दूसरे कारण थे, लेकिन इस झगड़े की भी उसमें अहम् भूमिका थी. लिहाज़ा इस सवाल के नतीजे में वही आंकड़े सामने आए, जो हमेशा से प्रासंगिक रहे हैं. ■

आप वोट देते समय इनमें से किसे प्राथमिकता देंगे?

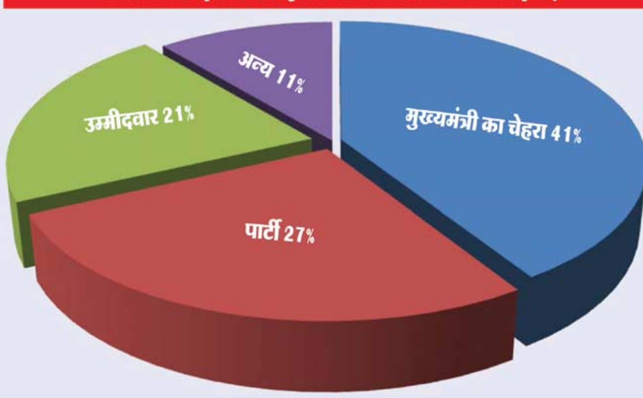

41 फीसदी लोगों ने कहा कि वे मुख्यमंत्री का चेहरा देखकर मतदान करेंगे. यहां यह जवाब इसलिए महत्वपूर्ण है कि राज्य की सत्ता के तीन प्रमुख दावेदार पार्टियों में बहुजन समाज पार्टी और समाजवादी पार्टी के उम्मीदवार, तीसरे दावेदार भाजपा के राजनाथ और योगी आदित्यनाथ से बहुत आगे हैं. इसकी एक वजह यह हो सकती है कि भाजपा ने उत्तरप्रदेश में किसी को भी मुख्यमंत्री का चेहरा नहीं बनाया है. 27 फीसदी लोगों ने कहा कि वे पार्टी को देखकर अपना प्रतिनिधि चुनते हैं. यह आंकड़ा इशारा करता है कि इस चुनाव में पार्टी का अपना वोट आधार भी चुनाव के नतीजों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला है. इस मामले में बसपा सबसे आगे दिख रही है. आम तौर पर यह देखा गया है कि चुनाव का क्रम जैसे-जैसे नीचे होता जाता है, उम्मीदवार का चेहरा उतना ही महत्वपूर्ण होता जाता है. ■

क्या गठबंधन का फ़ायदा समाजवादी पार्टी को होगा?

41 फीसदी भागीदारों ने यह माना कि कांग्रेस-सपा गठबंधन की वजह से सपा को फायदा हो सकता है. वहीं 32 फीसदी का यह मानना था कि इस गठबंधन का सपा को कोई लाभ नहीं मिलेगा. जबकि 27 फीसदी की कोई राय नहीं थी. यदि प्राप्त आंकड़ों से पिछले चुनाव के आंकड़ों की तुलना की जाए तो यह साफ हो जाता है कि निश्चित रूप से सपा को इस गठबंधन का फायदा होने वाला है. पिछले लोकसभा चुनाव में हालांकि कांग्रेस का वोट प्रतिशत कम हुआ था फिर भी उसे 8 प्रतिशत वोट मिले थे. यदि कांग्रेस के 8 प्रतिशत वोट सपा को मिल जाते हैं, तो निश्चित रूप से सपा को फायदा होगा. वहीं उत्तर प्रदेश में अपनी खोई हुई ज़मीन तलाश कर रही कांग्रेस को भी इसका फायदा मिल सकता है. ■

मोदी सरकार के दो साल

देश बढ़ता रहा किसान मरता रहा

किसान आत्महत्या में 42 फीसदी की वृद्धि

साहूकार नहीं, बैंकों से लिया था कर्ज

नोटबंदी के दौरान भी मरे किसान

अरहर दाल का रिकॉर्ड उत्पादन, नहीं मिला एमएसपी

किसानों को नहीं मिला लागत पर 50 फीसदी अतिरिक्त मूल्य

शशि शेखर

कहां तो तय था चिरागां हरेक घर के लिए, अब तो चिराग भी मयस्सर नहीं शहर के लिए. अगर बात प्रधानमंत्री मोदी के वादों और किसानों के मौजूदा हालात पर की जाए तो यह शेर एकदम फिट बैठता है. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो की ताजा रिपोर्ट बताती है कि साल 2014 से 2015 के बीच किसानों की आत्महत्या दर में 42 फीसदी का इजाफा हुआ है. इससे भी महत्वपूर्ण तथ्य यह कि एनसीआरबी की रिपोर्ट के मुताबिक, 2015 में 8007 किसानों ने आत्महत्या की, वहीं 2014 में यह संख्या 5650 थी. 2015 में जिन 8007 किसानों ने आत्महत्या की, उनमें से करीब 80 फीसदी ने साहूकारों से नहीं, बल्कि बैंकों से कर्ज लिया था. आमतौर पर अब तक इसके लिए साहूकारों को दोष दिया जाता था.

तो क्या इस रिपोर्ट के आधार पर यह नहीं माना जा सकता है कि बैंकों ने ही अब साहूकारों की जगह ले ली है. एक तरफ तो ये बैंक बड़े-बड़े उद्योगपतियों का कर्ज माफ कर देती है या उनसे औने-पौने में समझौता कर लेती है, वहीं सरकार भी कॉरपोरेट घरानों को कॉरपोरेट टैक्स में भारी छूट दे देती है. इधर देश के अन्नदाताओं को सरकारी बैंकों और सूक्ष्म वित्तीय संस्थानों से कुछेक हजार का कर्ज लेकर अपनी जान देनी पड़ रही है. जाहिर है, आज सरकार ही साहूकार की भूमिका में आ गई है. (देखें बॉक्स) सवाल है कि मोदी सरकार के उस नारे का क्या हुआ, जिसमें कहा गया था कि बहुत हुआ किसानों पर वार, अबकी बार मोदी सरकार. किसानों ने तो उन्हें प्रधानमंत्री बना दिया, लेकिन आज तक उन्हें स्वामीनाथन आयोग की सिफारिशों का लाभ नहीं मिला, जिसकी गूंज तब प्रधानमंत्री पद के उम्मीदवार नरेंद्र मोदी की तकरीबन हर एक

सभा में सुनने को मिलती थी.

नोटबन्दी के दौरान किसानों के मरने की खबर आई. पंजाब के किसान महिंदर सिंह पन्नू को अपनी बेटी की शादी के लिए बैंक से पैसा नहीं मिल पा रहा था. नतीजतन, उन्होंने आत्महत्या कर ली. उधर, नोटबन्दी की वजह से पैसा न मिलने के कारण मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ से भी किसानों द्वारा आत्महत्या किए जाने की खबरें मिलीं. वैसे, नोटबन्दी के दौरान कितने किसानों ने आत्महत्याएं की या उनकी मौत हुई, इसकी विस्तृत जानकारी अगले कुछ समय में आएगी. फिलहाल, एनसीआरबी रिपोर्ट की बात करें तो साल 2015 में महाराष्ट्र में 3030, तेलंगाना में 1358, कर्नाटक में 1197, छत्तीसगढ़ में 854 और मध्यप्रदेश में 516 किसानों ने आत्महत्याएं की. इन राज्यों में सर्वाधिक किसानों ने आत्महत्याएं की. 2015 में किसानों के अलावा कृषि क्षेत्र से जुड़े श्रमिकों द्वारा भारी संख्या में आत्महत्या किए जाने की बात भी एनसीआरबी की रिपोर्ट में है. रिपोर्ट के मुताबिक, साल 2015 में 4595 कृषि श्रमिकों (कृषि क्षेत्र में काम करने वाले मजदूर) ने आत्महत्याएं की. इस तरह देखें, तो सिर्फ 2015 में कृषि क्षेत्र से जुड़े 12,602 लोगों ने आत्महत्याएं की.

किसानों का दिवालिया होना और उन पर भारी कर्ज लद जाना, किसान आत्महत्या की बड़ी वजह रही. कृषि से जुड़े अन्य मुद्दे आत्महत्या की दूसरी वजहें रहीं, जैसे सूखा, फसल बर्बाद होना आदि. 2015 में आत्महत्या करने वाले किसानों में से करीब 73 फीसदी छोटे और सीमांत किसान थे, जिनके पास दो हेक्टेयर से भी कम जमीन थी. जाहिर है, किसानों की दुर्दशा दूर करने के लिए बनाई गई स्वामीनाथन कमेटी की सिफारिशों को अमल में लाकर प्रधानमंत्री को अपना वादा पूरा करना चाहिए. स्वामीनाथन आयोग ने अपनी सिफारिशों में बताया था कि सीलिंग सरप्लस और बंजर भूमि का वितरण किया जाए, ताकि भूमिहीन लोगों को जमीन मिल सके. मुख्य कृषि भूमि और जंगल की जमीन कॉरपोरेट क्षेत्र को ग़ैर कृषि प्रयोजनों के लिए देने पर रोक लगाई जानी चाहिए, लेकिन आज भी यह बदस्तूर जारी है. राष्ट्रीय भूमि उपयोग सलाहकार सेवा की स्थापना की जानी चाहिए. कृषि भूमि की बिक्री विनियमित करने के लिए एक तंत्र की स्थापना की जानी चाहिए. किसानों की आत्महत्या रोकने के लिए माइक्रो फाइनांस नीतियों का पुनर्गठन करना चाहिए, सस्ती क़ीमत, सही समय-स्थान पर गुणवत्तायुक्त बीजों और अन्य सामग्री की उपलब्धता सुनिश्चित की जानी चाहिए और न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) के कार्यान्वयन में सुधार करते हुए यह उत्पादन की औसत लागत की तुलना में कम से कम 50 फ़ीसद अधिक होनी चाहिए. लेकिन, दुख की बात है कि सरकार इस दिशा में कोई ठोस कदम उठाने के बजाए नोटबन्दी जैसे कॉस्मेटिक सर्जरी के काम में व्यस्त है. ■

feedback@chauthiduniya.com

किसान आत्महत्या के मामले में शीर्ष छह राज्य (2015)

राज्य	खुदकुशी	कुल प्रतिशत
महाराष्ट्र	3030	37.8
तेलंगाना	1358	17
कर्नाटका	1197	14.9
छत्तीसगढ़	854	10.7
मध्य प्रदेश	581	7.3
आंध्रप्रदेश	516	6.4

-एनसीआरबी

बैंक बन गए साहूकार

बैंक कैसे साहूकार की भूमिका में आ गए हैं, इसका उदाहरण है मध्य प्रदेश. यहां कर्ज वसूलने के जो मानक और मापदंड मध्य प्रदेश सरकार ने तय किए हैं, वह किसान आत्महत्या की एक बड़ी वजह है. आज मध्य प्रदेश का किसान लाखों रुपए कर्ज में डूबा हुआ है. किसान क्रेडिट कार्ड के तहत मिलने वाली इस सरकारी ऋण योजना की शर्त यह है कि किसानों को हर साल पूरा ऋण लौटाना अनिवार्य होता है. ऋण लौटाने की आखिरी तारीख 15 मार्च निर्धारित है. अगर कोई किसान 15 मार्च तक पैसे जमा नहीं करेगा, तो वह डिफॉल्टर हो जाएगा. वहीं किसानों को अपनी उपज का पैसा मंडी से मिलता है, जो 15 अप्रैल को खुलती है. ऐसे में, 15 मार्च की निर्धारित तारीख के बाद किसानों को 6 फीसदी अधिक ब्याज देना पड़ता है.

इस ऋण योजना के तहत किसानों पर 15 मार्च की तलवार लटकी होती है. किसानों को मदद देने के बजाय सरकार और बैंक ही साहूकार की भूमिका में आ जाते हैं. किसानों के पास 15 मार्च तक ऋण लौटाने का पैसा नहीं होता तो बैंक उस किसान को फिर से लोन दे देती है. बैंक अगले ही दिन इस नए लोन से मिले पैसे को जमा करा लेता है. इस तरह कागज पर किसान पिछले साल का कर्ज लौटा देता है और 16 फीसदी ब्याज देने से बच भी जाता है. लेकिन, किसानों को जो नया लोन मिलता है, उसमें वह पिछले लोन का 10 फीसदी जोड़ कर देता है. अगर किसी किसान ने एक लाख रुपए का लोन लिया था,तो बैंक उसे अगले साल एक लाख 10 हजार रुपये का लोन दे देता है. लिहाजा, किसान हर साल 10 फीसदी के हिसाब से ज्यादा से ज्यादा कर्ज में दबा चला जा रहा है. किसान क्रेडिट कार्ड के नाम पर जीरो फीसदी ब्याज के नाम पर जो मदद दी जा रही है, ये मदद ही असल में किसानों को आत्महत्या करने पर विवश कर रही है. ■

ओडीशा : मलकानगिरी में दो माह में 300 से अधिक बच्चों की मौत पर सरकार कर रही लीपापोती

नौनिहालों की मौत पर तमाशबीन सरकार

चंदन राय

ओडीशा में मलकानगिरी जिले के गोबिंदपाल्ली ग्राम पंचायत का एक गांव है कोमलापोदर. मसाई मडकामी बुखार से बेसुध दो साल की बच्ची मोंटी मडकामी को गोद में लिए बैठी हैं. मोंटी के पिता राजा मडकामी अपनी दूसरी बच्ची सूरी का इलाज कराने जिला हॉस्पिटल गए हैं. वे 60 किलोमीटर पैदल चलकर जब अपनी बच्ची की लाश लिए घर लौटते हैं, तो देखते हैं कि दूसरी बच्ची मोंटी भी बुखार से तप रही है. हताश होकर वे कहते हैं कि अस्पताल ने मेरी बच्ची की जान ले ली. अब हिम्मत नहीं है कि अपनी दूसरी बच्ची के इलाज के लिए फिर वहां जाऊं. हाल ये है कि आदिवासी जिला अस्पताल में अपने बीमार बच्चों को लेकर बड़ी उम्मीद के साथ आ रहे हैं, पर वार्ड से बच्चों के शव ही बाहर निकल रहे हैं.

कभी माओवादियों के स्ट्रॉन्ग होल्ड रहे मलकानगिरी जिले में जापानी इन्सेफ्लाइटिस (जेई) से दो माह में 300 से अधिक बच्चे दम तोड़ चुके हैं. सरकारी अधिकारियों के लिए महज ये आंकड़े हैं, लेकिन इन आंकड़ों के पीछे हजारों, लाखों आदिवासियों की पीड़ा, उनका दर्द छिपा है. सरकार कह रही है कि मात्र 120 लोगों की मौत जापानी इन्सेफ्लाइटिस से हुई है. वहीं, स्थानीय स्वास्थ्य विभाग इस वर्ष बेहतर मानसून को इस बीमारी के लिए जवाबदेह बताता रहा. अधिकारियों के मुताबिक सितम्बर के अंत तक बारिश होती रही है, जिससे बड़ी संख्या में मच्छर पनपे हैं.

सरकार कह रही, मौत के लिए आदिवासी खुद जिम्मेदार

स्थानीय सोशल वर्कर्स का कहना है कि हालात बदतर हैं और राज्य सरकार उल्टे यह आरोप लगा रही है कि मौतें 'आदिवासियों की नासमझी' के कारण हो रही हैं, यानी बच्चों की मौत के लिए खुद आदिवासी ही दोषी हैं. पिछले माह इन मौतों पर ध्यान देने के लिए राज्य सरकार ने एक 'उच्च स्तरीय विशेषज्ञ कमेटी' गठित की थी. कमेटी ने इन मौतों को 'जहरीले बीज' खाने से हुई मौत बता दिया. वहीं, प्रभावित ग्रामीणों ने कमेटी की रिपोर्ट को 'हास्यास्पद' बताया है. ग्रामीणों ने कहा कि छह माह के बच्चे जंगलों में कैसे जा सकते हैं और जहरीले बीज कैसे खा सकते हैं? वहीं, विशेषज्ञ सिर्फ पांच बच्चों के यूरीन सैम्पल पर आधारित साइंटिफिक रिपोर्ट पर भी सवाल उठा रहे हैं. सामाजिक कार्यकर्ता डॉक्टर जैकब जॉन कहते हैं कि यह बीज आदिवासी सदियों से खाते आ रहे हैं, फिर ये मौत अभी क्यों हो रही हैं और सिर्फ बच्चे ही इसके शिकार क्यों हो रहे हैं? एक्सपर्ट टीम आंगनबाड़ी, पीडीएस और आईसीडीएस जैसे सरकारी कार्यक्रमों की असफलता पर चुप क्यों है?

आदिवासी बच्चों की असामयिक मौत पर दिल्ली, गुवाहाटी, नांदेड, हैदराबाद, कोलकाता, बेंगलुरू, चेन्नई, मुम्बई और थिरुवनन्तपुरम में जगह-जगह प्रदर्शन होने लगे. कुछ सामाजिक कार्यकर्ता और संगठन इस बीमारी को राष्ट्रीय स्वास्थ्य आपदा घोषित करने के लिए केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय पर दबाव डाल रहे हैं. मार्च में कुछ समूह के प्रतिनिधियों ने स्वास्थ्य मंत्रालय व राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन से जुड़े कुछ अधिकारियों से मुलाकात की थी. मलकानगिरी एकता समूह की देवांगना कहती हैं कि शुरू में अधिकारियों ने इसे राज्य सरकार का विषय बताकर अपने दायित्व से पल्ला झाड़ना चाहा. उन्होंने यहां तक कहा कि जिले में तुरंत टीकाकरण शुरू कराने के लिए हमारे पास कोई सिस्टम नहीं है. उन्होंने यह भी कहा कि उनके पास विशेषज्ञ नहीं हैं, जो इस दिमागी बुखार की पहचान कर सकें. जब इन आदिवासी बच्चियों की चीखें दिल्ली तक पहुंचीं, तब जाकर केंद्र सरकार कुछ हरकत में आई. केन्द्र सरकार ने राज्य सरकार को इससे निपटने के लिए ठोस योजना बनाने के निर्देश दिए हैं, लेकिन अब भी जमीनी स्तर पर हालात जस-के-तस हैं.

मेक इन ओडीशा में जुटा रहा अमला

इस दौरान जब मलकानगिरी में आदिवासी समुदाय जापानी इन्सेफ्लाइटिस से दम तोड़ रहा था, सरकारी अधिकारी दिसंबर में भुवनेश्वर में मेक इन ओडिशा कार्यक्रम को सफल बनाने में जुटे थे. कई मेट्रो शहरों में रोड शो निकाला गया और सैकड़ों करोड़ रुपए आयोजन पर खर्च किए गए. कह सकते हैं कि राज्य सरकार की काहिली और असमर्थता के कारण यह बीमारी हर साल आदिवासी क्षेत्रों में बच्चों को अपना शिकार बनाता रहा है.

राइट टू फुड कैंपेन आरटीएफसी ने इस बीमारी से प्रभावित विभिन्न जिलों का दौरा कर एक फैक्ट फाइंडिंग रिपोर्ट पेश की, जिसमें इस बात का जिक्र था कि खाद्य सुरक्षा और इंटीग्रेटेड चाइल्ड डेवलपमेंट सर्विस (आईसीडीएस) और मिड डे मील जैसे सरकारी कार्यक्रमों की असफलता के कारण यहां के बच्चे स्थायी कुपोषण के शिकार हो रहे हैं. कुपोषित बच्चों की प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है और वे आसानी से किसी बीमारी के शिकार हो जाते हैं. जेई प्रभावित बच्चों में 95 फीसद आदिवासी हैं और उनमें सभी कुपोषित हैं. इनमें से अधिकतर बच्चियां हैं. इसका प्रमुख कारण गरीबी, पोषकयुक्त भोजन का अभाव और सरकारी कार्यक्रमों की असफलता है. हालत ये है कि यहां के कुछ गांवों में मनरेगा मजदूरों को सात महीने से पैसा नहीं मिला है. 2014 के हेल्थ सर्वे रिपोर्ट में भी यह कहा गया था कि मलकानगिरी के दस में से सात बच्चे कम वजन के हैं. यह क्षेत्र देश के सौ जिलों में से अंडरवेट बच्चों के मामले में तीसरे नंबर पर था. आरटीआई से जानकारी मिली कि 2007-08 से लेकर 2011-12 तक साधारण बीमारियों, जिसमें डायरिया, सर्दी-जुकाम, अस्थमा, ज्वर आदि से 7400 बच्चों की मौत हुई थी.

जापानी इन्सेफ्लाइटिस मच्छरों से पैदा होने वाली बीमारी है. इसे दिमागी बुखार भी कहा जाता है. इस बीमारी में करीब 25 फीसद बच्चों की मौत हो जाती है, जो बच जाते हैं, उनमें भी 30-40 फीसद बच्चे शारीरिक और मानसिक विकलांगता के शिकार हो जाते हैं.

और भी हैं समस्याएं

सप्तधारा नदी पार कर और फिर 60 किलोमीटर पैदल चलकर जिला अस्पताल पहुंचना आदिवासियों के लिए कोई समस्या नहीं है. आदिवासी ट्यूब में बैठकर उफनती नदी पार करते हैं. स्थिति इतनी भयावह है कि अस्पताल जाने के दौरान या तो मरीज नदी में बह जाते हैं या रास्ते में ही दम तोड़ देते हैं. जो इस आपदा से जूझकर अस्पताल पहुंच भी जाते हैं, तो अस्पताल प्रशासन सहयोग नहीं करता है. वहीं जिला अस्पताल के पास ना तो दवाएं हैं, ना विशेषज्ञ डॉक्टर. डेढ़ साल की मंजुम माढ़ू तेज बुखार से पीड़ित थी. उसे इलाज के लिए कालीमेला सीएचसी ले जाया गया, जहां से उसे जिला अस्पताल रेफर कर दिया गया. वहां डॉक्टर्स ने कुछ दवा देकर उसे घर भेज दिया. अगले ही दिन बुखार और तेज हो गया. राजूल माढ़ू उसे लेकर जिला अस्पताल निकले, लेकिन रास्ते में ही उसकी मौत हो गई. ऐसे कई मामलों में डॉक्टर्स ने या तो मरीजों को दवा देकर घर भेज दिया, इलाज में लापरवाही बरती या फिर एडमिट ही नहीं किया. ■

feedback@chauthiduniya.com

क़हर बनकर टूटी सरकार की काहिली

ऐसा नहीं है कि यह आपदा पहली बार आदिवासियों पर टूटी है. 2011 और 2012 में भी इस बीमारी से सैकड़ों लोगों की मौतें हुई थीं, लेकिन स्थानीय प्रशासन आंखें मूंदे रहा. अलार्मिंग सिचुएशन होने के बाद भी सरकारी मशीनरी की काहिली का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि मलकानगिरी जिला अस्पताल में डॉक्टरों की संख्या राज्य में सबसे कम है. 125 बेड के जिला अस्पताल में डॉक्टर्स के 44 पोस्ट हैं, जिसमें से 35 खाली हैं. जिले में डॉक्टर्स के 103 पोस्ट हैं, जिसमें सिर्फ 37 डॉक्टर नियुक्त हैं. यहां तक कि 122 नर्सेज की जगह सिर्फ 43 की नियुक्ति हुई है. केंद्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने 2011 में 'नेशनल प्रोग्राम फॉर प्रिवेंशन एंड कंट्रोल ऑफ जापानी इन्सेफलाइटिस' कार्यक्रम शुरू किया था. देश भर में 19 राज्यों में 171 जापानी इन्सेफलाइटिस प्रभावित जिलों में केंद्र सरकार की मदद से यह योजना लागू होनी थी, लेकिन राज्य सरकार ने इस केंद्रीकृत योजना को मलकानगिरी में लागू कराने में कोई रुचि नहीं ली. ■

हज़ारों स्किल्ड लोगों को बेघर कर रही स्किल इंडिया की बात करने वाली सरकार

सपनों के फ्लैट से अच्छी है अपनी झुग्गी

निरंजन मिश्रा

ना आसना हर रहगुजर
ना मेहरबां है एक नजर
जाएं तो अब जाएं किधर...

मशहूर शायर जावेद अख्तर की ये पंक्तियां कठपुतली कॉलोनी से विस्थापित किए जा रहे लोगों के दर्द को बयां करती है. दिल्ली और आसपास के इलाकों में कला-कौशल का प्रदर्शन कर पेट पालने वाले हजारों लोग आज अपने ही घरों से निकाले जा रहे हैं. पुलिस का भय दिखाकर उन्हें घर छोड़ने को विवश किया जा रहा है. देश की राजधानी को झुग्गियों से आजादी दिलाने और विकास के आंकड़ों को दुरुस्त करने की सियासी कोशिशों में वे दर-बदर होने को मजबूर हैं, जिन्होंने पूरी जिंदगी दो जून की रोटी के लिए जद्दोजहद में ही गुजार दी. जीने के लिए हर दिन दो वक्त की रोटी जिनकी चिंता हो, वे भला चकाचौंध वाले अपार्टमेंट के बारे में कैसे सोच सकते थे? लेकिन जब उनकी आंखों में सियासी सपने सजाए गए, तो लगा कि उनके भी अच्छे दिन आ जाएंगे. फिर जब यह कहा गया कि नए फ्लैट के लिए उन्हें लगभग डेढ़ लाख रुपए देने होंगे, तो वे सपने धाराशाई होते दिखने लगे. बिहार, बंगाल, राजस्थान, महाराष्ट्र जैसे कई राज्यों से आकर दिल्ली के शादीपुर इलाके के पास बसे लोगों ने आजादी के बाद से ही इस जगह को अपना बसेरा बनाया हुआ है. उस समय उन्होंने अपनी रचनात्मकता को ही इस जगह का नाम दिया था, लेकिन आज विस्थापन के भय में जी रहे लोगों को आशंका है कि कहीं उनका जीवन ही कठपुतली का खेल ना बन जाए.

बेघर होने का डर

कौन नहीं चाहता कि उसका अपना पक्का छत हो, जहां वह बेफिक्र होकर रहे. लेकिन कठपुतली कॉलोनी के लोगों को दिखाए गए घर के सपने या तो षड्यंत्र निकले या झूठे आश्वासन बनकर रह गए. कठपुतली कॉलोनी के निवासी कहते हैं, अपने फ्लैट के झूठे सपने से झुग्गी ही अच्छी है. वे बताते हैं कि यह उनकी खुशकिस्मती थी कि कॉमनवेल्थ गेम्स से पहले जब दिल्ली के चेहरे को सुंदर दिखाने के लिए तमाम झुग्गियों को उजाड़ा जा रहा था, तब वे बच गए थे. लेकिन अबकी बार जिस तरह से पुलिस तैनात करके जबरदस्ती वहां से निकाला जा रहा है, इससे इन्हें बेघर होने का डर सताने लगा है. दिल्ली में ऐसे कई उदाहरण हैं, जहां झुग्गियों को हटाने के लिए उनमें रातोंरात आग लगा दी गई, लोगों पर लाठियां भी बरसाई गईं. लेकिन जिन वादों के साथ उन्हें हटाया गया था और जो सपने दिखाए गए थे, वे सपने ही रह गए. यह भी एक कारण है कि अपने फ्लैट का लालच भी उन्हें झुग्गी छोड़ने को मजबूर नहीं कर रहा. डीडीए यहां पर अपार्टमेंट निर्माण के लिए पिछले 7 साल से प्रयास कर रहा है, लेकिन अब भी लोगों को इसके लिए राजी नहीं किया जा सका है. झुग्गी खाली कराने के डीडीए के कड़े रुख के कारण लोगों ने आंदोलन का रास्ता अपना लिया है. पुलिस के प्रयासों का विरोध करने और पत्थरबाजी के आरोप में 20 से ज्यादा लोगों पर मुकदमा दर्ज हो चुका है. कई दिनों से बस्ती के भीतर रह रहे लोगों का कहना है कि वे पुलिस की डर से बाहर नहीं जा पा रहे, कमाई बंद है. अब भी यहां 500 से ज्यादा फोर्स तैनात है. उन्हें डर है कि अगर हम बाहर निकले, तो पुलिस हमें पकड़ कर किसी केस में फंसा देगी.

अस्थाई घर कब तक

कठपुतली कॉलोनी के लोगों को डीडीए द्वारा आनंद पर्वत में अस्थाई रूप से बनाए गए ट्रांजिट कैंपों में शिफ्ट किया जा रहा है. लोगों से कहा गया है कि उन्हें 2 साल वहां पर रहना होगा, तब तक अपार्टमेंट बन जाएगा फिर उन्हें फ्लैट दे दिया जाएगा. लेकिन लोगों को डीडीए का यह आश्वासन आशंका से परे नहीं लग रहा. उनसे झुग्गी छोड़ने के लिए दस्तावेजों पर दस्तखत कराए जा रहे हैं, लेकिन इस बात की कोई लिखित गारंटी नहीं है कि उन्हें अगले दो साल में अपना फ्लैट मिल ही जाएगा. यहां आंदोलन कर रहे लोगों की मांग है कि डीडीए और रहेजा बिल्डर्स कोर्ट के सामने लिखित में यह दे कि हमें 2019 में हमारा फ्लैट मिल जाएगा, वह भी उन सुविधाओं के साथ जिनका वादा किया जा रहा है. लोगों का यह भी आरोप है कि यह डीडीए की मिलीभगत से रहेजा बिल्डर्स की उन्हें यहां से बेदखल करने की सोची-समझी रणनीति है. वे कारण बताते हैं कि यह बस्ती 5.22 हेक्टेयर में फैली हुई है, जिसमें से अपार्टमेंट केवल 3.4 हेक्टेयर जमीन पर बनेगा और बाकी पर रहेजा बिल्डर्स को निर्माण की आजादी होगी. 190 मीटर ऊंची 54 मंजिली इस इमारत में 170 लग्जरी फ्लैट होंगे, जिसमें एक स्काई क्लब और हेलीपैड भी बनाए जाने हैं. लोगों का कहना है कि ऐसा तो हो नहीं सकता कि ये फ्लैट हमें दिए जाएं. लोगों का यह भी कहना है कि हम अपनी पीड़ा लेकर सबके पास गए, लेकिन हमें उजड़ने से बचाने के लिए कोई राजनीतिक पार्टी आगे नहीं आ रही है. एक अनुमान के मुताबिक, यहां 3500 झुग्गियां हैं. डीडीए द्वारा 2009 में किए गए सर्वे पर भी यकीन करें, तो यहां 3100 झुग्गियां होने की बात कही गई थी, लेकिन प्रस्तावित पुनर्वास योजना में केवल 2641 फ्लैट बनाने की बात कही गई है. लोगों का गुस्सा इस बात को लेकर भी है कि उन्हें फ्लैट में रहने के लिए 1.12 लाख रुपए देने पड़ेंगे. इसके अलावा 5 साल तक रख-रखाव के लिए 30 हजार रुपए भी देने होंगे. यह सोचने वाली बात है कि जो लोग खेल-करतब और अपनी रचनात्मकता को बेचकर जीवन-बसर करते हैं, वे फ्लैट के लिए डेढ़ लाख रुपए कहां से लाएंगे. ■

80 के दशक से प्रयास जारी है

इससे पहले भी कई बार कठपुतली कॉलोनी के लोगों को अलग बसाने की बात कही गई. लेकिन वे सब कोशिशें बयानों तक ही सिमट कर रह गईं. सबसे पहले 1986 में यहां बसे लोगों को वसंत कुंज में स्थाई बसेरा देने की बात कही गई, लेकिन हुआ कुछ नहीं. 1990 में डीडीए के स्लम विंग ने कठपुतली कॉलोनी के लोगों के पुनर्वास के लिए योजना बनाई, लेकिन यह प्रयास सिर्फ योजना बनाने तक ही रह गया. 2002 में तत्कालीन शहरी विकास मंत्री बंडारू दत्तात्रेय ने कहा था कि उन्हें द्वारका के सेक्टर-16 में बसाया जाएगा, लेकिन यह बात बयानों से आगे नहीं बढ़ पाई. इस कोशिश के तहत आज पुलिस के डंडे का डर दिखाकर कठपुतली कॉलोनी के लोगों को वहां से हटाया जा रहा है. इसकी शुरुआत 2007 में हुई, जब झुग्गी मुक्त दिल्ली-2021 के मास्टर प्लान के तहत डीडीए ने काम करना शुरू किया. झुग्गियों की जगह पर अपार्टमेंट बनाने के लिए टेंडर निकाला गया. आठ आवेदनों में से डीडीए ने रहेजा बिल्डर्स को इस जगह पर अपार्टमेंट बनाने के लिए चुना. डीडीए और रहेजा बिल्डर्स के बीच अक्टूबर 2009 में हुए करार के अनुसार, यहां बनाए जा रहे अपार्टमेंट में 2 कमरे के 2641 फ्लैट्स बनाए जाने हैं. इस अपार्टमेंट में दो स्कूल, पार्क और ओपन थियेटर बनाने की भी बात कही गई है. ■

feedback@chauthiduniya.com

डिजिटल इंडिया-कैशलेस इंडिया के सपनों के बीच साइबर अपराध की चुनौती

साइबर अपराध : सुरक्षा में सेंध की नई चिंता

चौथी दुनिया ब्यूरो

बात चाहे एक पाकिस्तानी वीडियो क्लिप के जरिए मुजफ्फरनगर में दंगा कराने की हो, बांग्लादेशी हिंसा की तस्वीरों से असम को जलाने की, किसी और की बात को किसी और की बात बताकर फैलाने की या हैकिंग के जरिए भारतीय सुरक्षा व्यवस्था में सेंध लगाने की. साइबर अपराध के बदलते तरीकों और बढ़ती घटनाओं ने अब एक ऐसी समस्या का रूप ले लिया है, जो सुरसा की भांति मुंह फैलाए खड़ी है और हमारी सरकार या सुरक्षा एजेंसियां चाह कर भी उनका समाधान नहीं कर पा रही हैं. संचार के बेहतर माध्यमों के रूप में दिखने वाले व्हाट्सअप, फेसबुक, ट्वीटर और अन्य सोशल मीडिया कैसे हिंसा और उन्माद का साधन बन गए, पता ही नहीं चला. हालांकि पता तो अब भी नहीं चल रहा है कि कब, कौन, किस तरह से और किस पहचान से किसको साइबर अपराध का शिकार बना ले रहा है.

बिगाड़ रहा है सांप्रदायिक माहौल

3 सितंबर 2015 को आगरा के शमशाबाद इलाके में एक आपत्तिजनक फेसबुक पोस्ट को लेकर सांप्रदायिक माहौल इतना बिगड़ा कि इसने दो धर्मस्थलों में तोड़फोड़ और कई दुकानों में आगजनी का भयंकर रूप ले लिया. दंगे का रूप ले रही इस घटना पर पुलिस-प्रशासन काफी मशक्कत के बाद काबू पा सकी. कुछ ऐसी ही घटना सामने आई बिहार के भोजपुर जिले के शाहपुर में, जहां 7 जुलाई 2016 को एक धर्म विशेष के खिलाफ फेसबुक पर की गई टिप्पणी ने सांप्रदायिक तनाव का रूप ले लिया. रानीसागर गांव में सड़क पर उतरे उपद्रवियों ने कई झोपड़ियों को आग के हवाले कर दिया. इस घटना पर काबू पाने के लिए पुलिस को लाठीचार्ज भी करनी पड़ी थी. बीते साल बिहार में ही साइबर अपराध की एक ऐसी घटना सामने आई, जिसने कई जिलों को आग के हवाले कर दिया. 5 अगस्त 2016 को बिहार के छपरा के मकेर थाना क्षेत्र के दक्षिणी टोले में एक युवक ने आपत्तिजनक वीडियो फेसबुक पर पोस्ट कर दिया. वीडियो को सोशल मीडिया पर वायरल होते देर न लगी और इसने सांप्रदायिक दंगे का रूप ले लिया. प्रशासन ने एहतियातन पूरे जिले में निषेधाज्ञा लागू कर दी. इंटरनेट सेवा को बंद कर दिया गया. तोड़फोड़ और हिंसा के आरोप में 25 लोगों को गिरफ्तार किया गया. लेकिन तब तक उस वीडियो ने पड़ोस के जिलों को भी अपने प्रभाव में ले लिया था. दंगे और आगजनी ने सिवान और गोपालगंज को भी अपना शिकार बना लिया. इन दोनों जिलों में भी इंटरनेट सेवा बंद करनी पड़ी. समाज में वैमनस्यता फैलाने वालों के लिए सोशल मीडिया और साइबर स्पेस एक नए औजार बनते जा रहे हैं.

ऐसी घटनाओं के भयंकर रूप लेने का एक सबसे बड़ा कारण ये है कि हमारे देश में पुलिस-प्रशासन और सुरक्षा एजेंसियों के पास साइबर अपराधों से निबटने के लिए न तो पर्याप्त संसाधन हैं और न ही जरूरी ट्रेनिंग. ऐसे मामलों में भी पुलिस अपराधियों को पकड़ने के लिए पारंपरिक तरीकों का ही इस्तेमाल करती है. यही कारण है कि अपराधियों और अपराध के कारणों तक पहुंचते-पहुंचते घटना विकराल रूप ले लेती है. सरकारें कहती तो हैं कि वे साइबर अपराधों पर अंकुश लगाने के लिए वैज्ञानिक तरीकों के इस्तेमाल पर जोर दे रही हैं, लेकिन जमीनी हकीकत कुछ और ही सच्चाई बयां करती है. हाल यह है कि देश के लगभग आधे राज्यों में ही साइबर पुलिस स्टेशन हैं. जो हैं उनमें भी प्रशिक्षण प्राप्त पुलिसकर्मियों का अभाव है. महाराष्ट्र सरकार ने घोषणा की है कि स्वतंत्रता दिवस के दिन राज्य के सभी जिलों में एक-एक साइबर पुलिस स्टेशन की शुरुआत की जाएगी. इसके लिए आधारशिला भी रख दी गई है. लेकिन यह देखने वाली बात होगी कि ये कितने प्रभावी होते हैं, क्योंकि महाराष्ट्र उन अग्रणी राज्यों में है, जो साइबर अपराध से सबसे ज्यादा जूझ रहे हैं. कम चिंतनीय यह भी नहीं कि देश के एकमात्र साइबर ट्राइब्यूनल में जज ही नहीं हैं.

हैकिंग है सबसे बड़ी चिंता

चिंता की बात यह है कि केवल आम लोग ही इन साइबर अपराधियों का शिकार नहीं हो रहे हैं. बड़ी हस्तियों और शख्सियतों से लेकर सरकारी प्रतिष्ठान भी इसकी जद में आ रहे हैं. पिछले साल ही हमने देखा कि कैसे देश की बड़ी राजनीतिक पार्टी कांग्रेस और देश के एक बड़े नेता राहुल गांधी का ट्वीटर एकाउंट हैक हो गया और उसपर कई आपत्तिजनक पोस्ट किए गए. जब तक ट्वीटर एकाउंट को हैकर से आजाद कराया जाता, तब तक वह अपने मकसद में कामयाब हो चुका था. बीते कुछ वर्षों में प्रधानमंत्री कार्यालय और सीबीआई जैसे महत्वपूर्ण संस्थानों की वेबसाइट्स पर साइबर अटैक हो चुके हैं. 23 अगस्त 2016 को एक दैनिक समाचार पत्र को आरटीआई के जरिए मिली जानकारी के अनुसार बीते साढ़े चार साल में 979 सरकारी वेबसाइट्स हैक हुई हैं.

इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा दिए गए इन आंकड़ों के अनुसार 2012 में 371, 2013 में 189, 2014 में 155, 2015 में 164 और 2016 में जून महीने तक 100 सरकारी वेबसाइट्स हैक हुईं. आरटीआई से मिली इस जानकारी में यह भी बताया गया था कि भारत में बीते साढ़े चार सालों में सबसे ज्यादा साइबर हमले पाकिस्तान, बांग्लादेश और चीन से हुए हैं.

ऐसा भी नहीं है कि ये साइबर हमले हाल में ही देखने को मिल रहे हैं. 2011 में दिल्ली में हुए कॉनवेल्थ खेलों के दौरान ही महत्वपूर्ण भारतीय वेबसाइटों पर 8 हजार से ज्यादा बार साइबर हमले हुए थे. 2010 के बाद से साइबर हमले की घटनाओं में तेजी देखने को मिली है. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़े के मुताबिक 2010 में भारत में आईटी एक्ट के तहत 966 मामले दर्ज हुए थे, जो 2011 में बढ़कर 1781 हो गए. यानी एक साल में ही देश भर में साइबर हमलों में लगभग 85 फीसदी की बढ़ोतरी देखने को मिली. ■

feedback@chauthiduniya.com

देश में साइबर थाने

आंध्रप्रदेश	2
अरुणाचल प्रदेश	1
बिहार	1
छतीसगढ़	1
केरल	1
राजस्थान	1
चंडीगढ़	1
ओडिशा	1
मध्यप्रदेश	1
पंजाब	2
तमिलनाडु	7
कर्नाटक	7
झारखंड	7
पश्चिम बंगाल	5
उत्तराखंड	1
झारखंड	1

कमज़ोर क़ानून भी है कारण

साल-दर-साल साइबर अपराध के बढ़ते आंकड़ों का एक कारण यह भी है कि देश में साइबर अपराधों को रोकने के लिए कठोर नियम व कानूनों का अभाव है. हाल के दिनों में ऐसी कई घटनाएं सामने आई हैं, जिनमें साइबर स्पेस का इस्तेमाल कर के बड़ी व विभत्स घटनाओं को अंजाम दिया गया है. लेकिन ऐसे अपराध करने वालों तक कानून की चाबुक पहुंचे, इसकी कोई मुकम्मल व्यवस्था ही भारत में नहीं है. किसी भी वेबसाइट पर अपलोड की गई आपत्तिजनक सामग्री को हटाने के लिए नियम यह है कि उस वेबसाइट को नोटिस दिए जाने के 36 घंटों के भीतर उसे उस सामग्री को हटाना होगा. आज के दौर में जबकि कोई भी भ्रामक या उन्मादी सूचना चंद सेकंडों में देश भर में फैल जाती है, हम समझ सकते हैं कि यह समय अपराधियों के लिए कितना ज्यादा है. यह हास्यास्पद ही है कि भारत में साइबर अपराध गैर जमानती नहीं हैं. साथ ही इसके लिए अधिकतम सजा भी तीन साल ही है. सोचने वाली बात है कि इंटरनेट का इस्तेमाल कर के किसी भी बड़ी घटना को अंजाम देने वाला आदमी महज तीन साल की सजा पा कर आजाद हो सकता है. हालांकि यह भी तय नहीं है कि उसे सजा मिल ही जाय. ■

दो साल बेमिसाल या दो साल बदहाल!

प्रशान्त शरण

झारखंड

झारखंड के मुख्यमंत्री रघुवर दास भले ही अपने दो साल के कार्यकाल को बेमिसाल बताकर पार्टी के आला नेताओं से अपनी पीठे थपथपवा लें या फिर अपने नेताओं से तारीफों के पुल बंधवा लें, पर सच्चाई कुछ और ही है. अगर स्थानीय नीति को छोड़ भी दें, तो सरकार ने ऐसा कुछ नहीं किया है, जिसे बेमिसाल कहा जा सके. जब मुख्यमंत्री ने अपने मंत्रिमंडल के सदस्यों, विधायकों, सांसदों एवं कार्यकर्ताओं को पंचायत स्तर पर जाकर सरकार की उपलब्धियां बताने को कहा, तो उन्हें यह समझ नहीं आया कि आखिर कौन सी उपलब्धियां जनता को बताई जाएं. आदिवासी बहुल क्षेत्रों में तो भाजपाई जाने से ही कतरा रहे थे, क्योंकि सीएनटी एसपीटी एक्ट में संशोधन के कारण राज्य के अधिकतर आदिवासी आक्रोशित हैं. यहां तक कि मुख्यमंत्री रघुवर दास को खुद सरायकेला-खरसांवा में आदिवासियों के विरोध का सामना करना पड़ा. यहां आक्रोशित जनसमुदाय ने मुख्यमंत्री की सभा में जाकर बवाल काटा और जूते-चप्पल तक फेंके. पूरे राज्य में पांच सौ से अधिक जनसभा करने का निर्णय पार्टी स्तर पर लिया गया था, इसके लिए प्रखंड स्तर पर उपलब्धियों की सूची भी भेजी गई थी, जिसे जनता को बताया जाना था.

500 सभाएं कर गिनाई सरकार की उपलब्धियां

भाजपा के आला नेताओं के आदेश पर पंचायतों से लेकर जिला स्तर पर 500 सभाएं की गई और इसमें सरकार की उपलब्धियां बताई गई. इसके लिए बड़े-बड़े पम्फलेट एवं बुकलेट छपवाकर जनता के बीच बांटे गए. कुछ सभाओं में हुड़दंग भी हुए. भाजपा के प्रदेश प्रवक्ता जेबी तुबिद की सभा में तो ग्रामीणों ने काले झंडे भी दिखाये, यहां तक कि मुख्यमंत्री रघुवर दास की एक सभा में ग्रामीणों ने जमकर बवाल किया, मुख्यमंत्री विरोधी नारे लगाए और जूते-चप्पल तक फेंके. बाद में सरायकेला के उपायुक्त एवं आरक्षी अधीक्षक का तत्काल स्थानान्तरण सरकार ने कर दिया था. ■

रघुवर सरकार अपनी उपलब्धियों पर जनता की वाहवाही तो नहीं बटोर सकी, वहीं कुछ मामलों को लेकर सरकार की जमकर किरकिरी हुई. ऐसे कुछ मामले हैं, सीएनटी एसपीटी एक्ट में संशोधन, रांची में बीटेक छात्रा की निर्मम हत्या के एक माह बाद भी अपराधियों का सुराग नहीं मिलना, एनटीपीसी के विस्थापितों पर पुलिस गोलीकांड, देश-विदेश के दौरों के बाद एक भी निवेशकों का झारखंड नहीं आना, अडानी समूह के लिए नियमों को शिथिल कर लाभ पहुंचाना, बुनियादी समस्याओं का घोर अभाव आदि. भ्रष्टाचार एवं नक्सलवाद जैसी गंभीर समस्याओं को समाप्त करने का दावा भले ही मुख्यमंत्री जोर-शोर से करें, पर नक्सल समस्या से पूरा राज्य त्रस्त है.

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की एक महत्वाकांक्षी योजना स्वच्छ भारत योजना है. राज्य में 21 लाख व्यक्तिगत शौचालय के निर्माण की बातें कही गई, 3300 गांवों को खुले में शौच से मुक्त कराने का दावा किया गया, लेकिन एक अंतरराष्ट्रीय संस्था के सर्वे से पता चला कि 14 लाख से अधिक शौचालयों का कोई अता-पता ही नहीं है. अधिकारियों की मिली-भगत से बिचौलिए रकम डकार गए. हरमू नदी के सौन्दर्यीकरण का काम गुजरात की एक कंपनी को नब्बे करोड़ में दिया गया, पर हाल ये है कि यह नदी एक बड़े नाले में तब्दील होकर रह गई. हजारों गांवों में न तो बिजली पहुंची है और न ही सड़क, इसके बावजूद राज्य को सबसे समृद्ध और बेमिसाल होने का दावा किया जा रहा है.

सरकार का कार्यकाल पूरी तरह विफल: कांग्रेस

प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष सुखदेव भगत ने कहा कि सरकार को दो साल का जश्न मनाने का कोई नैतिक हक नहीं है. कांग्रेस अध्यक्ष ने कहा कि विश्व बैंक और डीआईपीपी की ताजा रैंकिंग में झारखंड को तीसरे से सातवें स्थान पर रखा गया है. उन्होंने कहा कि वित्तीय वर्ष समाप्त होने में तीन माह बचे हैं, पर योजना राशि का पचास प्रतिशत भी अभी तक खर्च नहीं हो पाया है, राजस्व लक्ष्य भी पूरा नहीं हो सका है. खनन विभाग सात हजार करोड़ के लक्ष्य के मुकाबले मात्र दो हजार करोड़ रुपये ही राजस्व ला सका है. ■

रघुवर दास दावा करते हैं कि यह पहला राज्य है, जो कैशलेस हुआ और डिजीटल इंडिया की शुरुआत हुई है. मुख्यमंत्री ये भी कहते हैं कि उनके सफल प्रयास के कारण ही झारखंड को निवेश के मामले में तीसरा स्थान दिया गया है. यही कारण है कि देश-विदेश के निवेशक झारखंड का रुख करने लगे हैं. उन्होंने कहा है कि पांच वर्षों में झारखंड देश का सबसे समृद्ध राज्य होगा.

भाजपा नेताओं में से अधिकतर की राय है कि मुख्यमंत्री दास पार्टी कार्यकर्ताओं और नेताओं की उपेक्षा करते हैं. मुख्यमंत्री अपने काम पर ध्यान कम देते हैं, जबकि पार्टी में समकक्ष नेताओं का कद छोटा करने में ज्यादा रुचि लेते हैं. यही कारण है कि संगठन और सरकार में मुख्यमंत्री के विरोधियों की संख्या ज्यादा है. इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि बहुमत में होने के बाद भी दो वर्षों में मुख्यमंत्री बारहवां मंत्री नहीं खोज सके हैं. राज्यपाल ने इस पर आपत्ति जताते हुए जल्द मंत्रिमंडल को पूरा करने का निर्देश दिया था, पर अभी तक एक मंत्री का पद खाली है.

झाविमो जारी करेगा ब्लैक-पेपर: प्रदीप यादव

झारखंड विकास मोर्चा के प्रधान महासचिव प्रदीप यादव ने सरकार के दो साल के कार्यकाल पर सवालिया निशान लगाते हुए कहा कि सरकार ने दो वर्ष में कोई काम नहीं किया है, केवल लुभावनी घोषणाएं कर जनता को गुमराह किया है. उन्होंने कहा कि सरकार के दो साल के कार्यकाल पर झाविमो जल्द ही ब्लैक पेपर जारी करेगा. सरकार के कार्यकाल में नमक घोटाले का पर्दाफाश आज तक नहीं हो सका है. विधानसभा समिति की रिपोर्ट भी धूल फांक रही है. ऊर्जा नीति में संशोधन के कारण सरकार को 2300 करोड़ रुपये का नुकसान हुआ है. पीटीपीएस को एनटीपीसी को सौंपना, संथाल परगना की जमीन को औने-पौने दामों में उद्योगपतियों को बेचना, यह सब राज्य सरकार का भ्रष्टाचार नहीं है, तो क्या है? ■

विधानसभा में प्रतिपक्ष के नेता एवं पूर्व मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन ने दो साल के कार्यकाल को पूरी तरह विफल बताते हुए कहा कि यह सरकार आदिवासी, मूलवासी एवं अल्पसंख्यक विरोधी है. मुख्यमंत्री केवल आदिवासियों को जमीन से बेदखल कर औद्योगिक घरानों को लाभ पहुंचाने का काम कर रहे हैं. दो साल में कोई विकास का काम नहीं हुआ है. रघुवर दास के कार्यकाल के बारे में जब दो सौ मतदाताओं से पूछा गया, तो अधिकतर ने कहा कि दो साल में कोई ऐसा काम नहीं हुआ, जिसे सरकार की उपलब्धि बताई जा सके. ■

feedback@chauthiduniya.com

बिहार में बेहतर संभावना तलाशता आरएसएस

ईर्शादुल हक

दस जनवरी को कंपकपाती ठंड की रात में बिहार के आरएसएस की कोर टीम ने एक सख्त फैसला लिया. फैसला यह था कि सूर्योदय होते-होते पटना के कृष्ण मेमोरियल हॉल के आस-पास लगी तमाम होर्डिंग्स को नोच दिया जाए, ये होर्डिंग्स, चाहे जिनकी भी हों, चाहे यह भाजपा के केंद्रीय मंत्रियों की ही क्यों न हों. 11 जनवरी की सुबह होते ही वहां से तमाम होर्डिंग्स गायब थीं. अब ये कहना मुश्किल है कि ये होर्डिंग्स सूर्योदय से पहले नोच डाली गई या सूर्योदय के बाद. पर पक्की बात यह है कि इन होर्डिंग्स में भाजपा के बिहार के तमाम केंद्रीय मंत्रियों समेत राधा मोहन सिंह का स्वागत मुद्रा में मुस्कुराता चेहरा था, जिन पर पंडित दीनदयाल उपाध्याय के जन्मशताब्दी समारोह में शामिल होने वालों का स्वागत किया जा रहा था. इन होर्डिंग्स में भाजपा के अन्य कद्दावर नेताओं की तस्वीरें भी थीं. कृष्ण मेमोरियल हॉल का विशाल प्रांगण, जो अब से कुछ देर पहले तक मेहमानों के स्वागत में लगी होर्डिंग्स और बैनर्स के चमचमाते माहौल से सजा-धजा था, वीरान हो चुका था. फिर सुबह बीती. होर्डिंग्स के गायब होने पर सुगबुगाहट तो हुई, लेकिन ये सुगबुगाहट खुद ही दम तोड़ गयी. दोपहर हुआ और फिर हॉल के अंदर रौनक बढ़ी. देखते-देखते हॉल खचाखच भर गया. भाजपा के बिहार के तमाम केंद्रीय मंत्री एक-एक कर आते चले गये. राधामोहन सिंह, रविशंकर प्रसाद और राजीव प्रताप रूढ़ी. इसी तरह बिहार के तमाम भाजपाई कद्दावर नेता- सुशील मोदी, प्रदेश अध्यक्ष नित्यानंद राय, विपक्ष के नेता प्रेम कुमार नवल, किशोर यादव, यहां तक कि भाजपा के बिहार प्रभारी धर्मेंद्र यादव, सभी आए. सब सामने लगी कुर्सियों पर बैठ गए. कार्यक्रम शुरू हुआ, लेकिन इनमें से एक भी नेता को मंच पर नहीं बुलाया गया. सारे के सारे कार्यक्रम शुरू होने से लेकर, समाप्त होने तक डिसिप्लिंड कार्यकर्ता की तरह बैठे रहे. कार्यक्रम का आयोजन एकात्म मानवदर्शन अनुसंधान एंव विकास प्रतिष्ठान और विति(प्रज्ञा प्रवाह) ने किया था. कहना न होगा कि इस आयोजन के पीछे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ यानी आरएसएस की ताकत लगी थी. अवसर था जनसंघ (भाजपा का पुराना नाम) के संस्थापक पंडित दीनदयाल उपाध्याय के जन्मशती समारोह का और कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य था उनके जीवन पर आधारित पुस्तक पंडित दीनदयाल उपाध्याय सम्पूर्ण वांड्मय' के लोकार्पण का.

इस समारोह के उद्देश्यों पर चर्चा आगे होगी, लेकिन यहां यह निशानदेही करना जरूरी है कि आरएसएस जो भाजपा की मातृ संस्था है, ने भाजपा के कद्दावर नेताओं को इस आयोजन के मार्फत दो महत्वपूर्ण सबक सिखा दिया. पहला- कार्यक्रम के स्वागत करने वाले कद्दावर केंद्रीय मंत्रियों को यह एहसास दिला दिया गया कि उसके कार्यक्रम में वे अपना चेहरा चमकाने की हिमाकत नहीं कर सकते. यही वजह रही कि केंद्रीय मंत्रियों की होर्डिंग्स और बैनर्स नोचवा डाले गए. दूसरा- आरएसएस के इस कार्यक्रम में भाजपा के तमाम नेताओं को मंच से नीचे बिठा कर उन्हें यह एहसास दिला दिया गया कि वे भले ही देश के नेता हैं, पर आरएसएस के समारोह में उनकी हैसियत महज श्रोता की है. मंच पर मुख्य अतिथि के बतौर अमित शाह विराजमान थे, वह भी इसलिए कि उनके हाथों पुस्तक का लोकार्पण होना था. मंच पर दीगर लोगों में चंद अति अनिवार्य और गिने-चुने चेहरे थे. एक महेश चंद्र शर्मा, जिन्होंने पुस्तक का सम्पादन किया है. दूसरे इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के अध्यक्ष राम बहादुर राय, जो विशिष्ट अतिथि थे और तीसरे पुस्तक के प्रकाशक प्रभात कुमार. कहा जा रहा है कि प्रभात ने ही इस आयोजन को स्पॉन्सर किया था. चौथे व्यक्ति वह थे, जिन्होंने मंच का संचालन किया यानी संचालनकर्ता कृष्णकांत ओझा. ओझा आरएसएस के दशकों पुराने स्वयंसेवक हैं. साथ ही प्रज्ञा प्रवाह के क्षेत्रीय संयोजक रामाशीष सिंह भी मंच पर थे. इस मंच पर कोई छठा ना तो आया और न ही किसी और के लिए कोई कुर्सी लगी थी.

भाजपा के सत्ता में आने के बाद अक्सर यह चर्चा चलती है कि आरएसएस अपने विचारों को तेजी से फैलाने में जुटा है. पंडित दीनदयाल उपाध्याय के विचारों का प्रसार, उसी का हिस्सा माना जा सकता है. केंद्र सरकार पंडित उपाध्याय के नाम पर अनेक सरकारी योजनाओं का नाम रख चुकी है (पंडित दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना व कौशल योजना आदि). आरएसएस व भाजपा पंडित उपाध्याय का जन्मशताब्दी समारोह इसी मकसद से मना रहे हैं. एक वर्ष तक चलने वाले इस कार्यक्रम में अभी तक दीनदयाल पर संग्रहित पुस्तक का लोकार्पण जयपुर, रायपुर और लखनऊ में किया जा चुका है. पटना आयोजन उसी कड़ी का अगला हिस्सा था. इस पुस्तक में दीनदयाल के विचारों, लेखों, भाषणों आदि का संग्रह है. कार्यक्रम के संचालक कृष्णकांत ओझा ने इन पंक्तियों के लेखक को कार्यक्रम के बाद बताया कि पंडितजी का दर्शन एकात्म मानववाद का दर्शन है. वह पश्चिम की प्रकृति के शोषण के दर्शन के विपरीत प्रकृति के दोहन और उसके संतुलन पर जोर देते हैं. वह मानवीयता पर आधारित दर्शन है, जिसमें विश्व और पर्यावरण का कल्याण संभव है. कृष्णकांत ओझा के इन तर्कों का अपना एक पक्ष है, पर आरएसएस के इस मकसद से वे इत्तेफाक रखते हैं कि पंडितजी के दर्शन को गांव-गांव तक पहुंचाना उनका मकसद है. इसलिए पुस्तक के लोकार्पण की यह श्रृंखला जारी है और आने वाले दिनों में देश के तमाम राजधानियों में ऐसे कार्यक्रम आयोजित होते रहेंगे.

> अमितशाह ने अपने भाषण में इस बात पर जोर दिया कि पंडित दीनदयाल के दर्शन मौजूदा दौर में और भी महत्वपूर्ण हो चुके हैं. शाह ने दीनदयाल के अंत्योदय के सिद्धांत का उल्लेख किया और कहा कि भाजपा इसी सिद्धांत को लेकर आगे बढ़ रही है. इसी क्रम में उन्होंने नोटबंदी के फैसलों को भी उनसे जोड़ा और कहा कि यह फैसला देश के 80 करोड़ गरीबों के हक में लिया गया है.

पटना के कार्यक्रम में भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने बार-बार दीनदयाल उपाध्याय को जनसंघ के संस्थापक के रूप में याद किया. इस क्रम में श्यामाप्रसाद मुखर्जी का जिक्र उन्होंने नहीं किया. मुखर्जी को 1951 में जनसंघ के संस्थापक के रूप में याद किया जाता है. पंडित दीनदयाल, मुखर्जी के बाद दूसरे स्थान पर थे. वह मुखर्जी के देहांत के बाद जनसंघ के नेता के रूप में उभरे. लेकिन अमितशाह ने इस सच्चाई को रेखांकित करने से गुरेज करना ही मुनासिब समझा. अमितशाह ने अपने भाषण में इस बात पर जोर दिया कि पंडित दीनदयाल के दर्शन मौजूदा दौर में और भी महत्वपूर्ण हो चुके हैं. शाह ने दीनदयाल के अंत्योदय के सिद्धांत का उल्लेख किया और कहा कि भाजपा इसी सिद्धांत को लेकर आगे बढ़ रही है. इसी क्रम में उन्होंने नोटबंदी के फैसलों को भी उनसे जोड़ा और कहा कि यह फैसला देश के 80 करोड़ गरीबों के हक में लिया गया है. उनके अनुसार नोटबंदी से टैक्स संग्रह बढ़ेगा, जिससे गरीबों के कल्याण की योजनायें शुरू की जाएंगी. शाह ने यह भी कहा कि भाजपा आज उनके सिद्धांतों पर ही अमल कर देश की सबसे बड़ी पार्टी बन कर अपनी सेवा दे रही है. उन्होंने भाजपा को जनसंघ का अवतार बताया. याद रहे कि जन संघ, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राजनीतिक संगठन के रूप में सामने आया था, जो बदलते समय और हालात के साथ फिलहाल भारतीय जनता पार्टी के रूप में सामने है. इस तरह संघ के राजनीतिक दर्शन की विरासत जनसंघ से ही आगे बढ़ी है. ऐसे में आरएसएस द्वारा जनसंघ के संस्थापक के विचारों का प्रसार करना स्वाभाविक रूप से उसकी रणनीति का हिस्सा है.

इस आयोजन से आरएसएस के सूत्रधारों में काफी उत्साह है. आरएसएस से जुड़े एक नीतिकार का दावा है कि पटना का आयोजन, जयपुर, रायपुर और लखनऊ के पिछले तीनों आयोजनों से ज्यादा कामयाब रहा. जब वह पटना के कार्यक्रम की सफलता की बात कर रहे थे, तो स्वाभाविक तौर पर उनका इशारा बिहार में आरएसएस की बेहतर संभावनाओं की तरफ था. इस आयोजन से आरएसएस को बिहार में अपने विचारों और कैडर के विस्तार में सहायता मिलेगी और पंडित दीनदयाल उपाध्याय पर लिखी पुस्तक इन विचारों के विस्तार का वाहक बनेगी. शायद यही वजह है कि जब इस आयोजन में राम बहादुर राय ने अपनी बात रखी, तो उन्होंने इस पुस्तक को 21वीं सदी का कुरआन तक घोषित कर दिया. राय यहीं नहीं रुके और उन्होंने यह भी कह दिया कि पंडित दीनदयाल के विचार बारूदी राजनीति में एक चिंगारी की हैसियत रखते हैं.

भले ही भाजपा आरएसएस की राजनीतिक इकाई के रूप में जानी जाती है, लेकिन देश की सत्ता पर उसका कब्जा होने के कारण आरएसएस को इस बात की सुविधा है कि वह उसके सहारे अपने संगठनात्मक और वैचारिक विस्तार को आगे बढ़ा सकती है. पिछले दिनों बिहार से यह खबर आयी थी कि भाजपा ने नोटबंदी के ऐलान के ठीक पहले राज्य के दर्जन भर से ज्यादा जिलों में जमीनें खरीदी थी. तब यह विवाद बढ़ा था कि उसने पुराने नोटों को ठिकाने लगाने के लिए अपने पैसे जमीन में निवेश किए थे. यह विवाद अपनी जगह है, लेकिन इसका दूसरा पहलू यह है कि इन जमीनों पर भाजपा के क्षेत्रीय और जिला कार्यालयों का निर्माण कराया जाएगा. भाजपा के एक करीबी सूत्र का कहना है कि भाजपा के कार्यालय भले ही राजनीतिक उद्देश्यों के लिए हों, पर इनका एक हिस्सा आरएसएस की गतिविधियों के लिए होता है. इसलिए इस बात में कोई संदेह नहीं कि आने वाले दिनों में इन कार्यालयों का जब निर्माण हो चुका होगा तो आरएसएस उनका उपयोग अपने संगठनात्मक और वैचारिक विस्तार के लिए करेगी. आरएसएस बिहार में लम्बी अवधि की योजना पर काम कर रहा है और पंडित दीनदयाल उपाध्याय पर हुआ यह आयोजन उसी का हिस्सा माना जा रहा है. ■

feedback@chauthiduniya.com

वनाधिकार से बेदख़ल होते थारू

कुमार कृष्णन

पश्चिमी चंपारण जिले के सबसे उत्तरी भाग में नेपाल की सीमा के पास बेतिया से लगभग 100 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है वाल्मीकि नगर. यह एक छोटा कस्बा है, जहां कम आबादी है और यह अधिकतर वन क्षेत्र में है. पश्चिमी चंपारण जिले का एक रेलवे स्टेशन नरकटियागंज के पास है. यह पार्क उत्तर में नेपाल के रॉयल चितवन नेशनल पार्क और पश्चिम में हिमालय पर्वत की गंडक नदी से घिरा है. यहां बाघ, स्लॉथ बीयर, भेड़िए, हिरण, सीरो, चीते, अजगर, पीफोल, चीतल, सांभर, नील गाय, हाइना, भारतीय सीवेट, जंगली बिल्लियां, हॉग डीयर, जंगली कुत्ते, एक सींग वाले राइनोसिरोस व भैंसे कभी-कभार चितवन से चलकर वाल्मीकि नगर में आ जाते हैं.

वाल्मीकि नगर टाइगर रिजर्व फॉरेस्ट को मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने टाइगर रिजर्व के लिए टूरिस्ट व सर्किट पैकेज बनाने की घोषणा की है. इसे टूरिस्ट प्लेस बनाने के लिए यहां के भोले-भाले थारूओं, उरांव और अन्य वनवासियों को उनके पारंपरिक व संवैधानिक अधिकारों से बेदखल किया जा रहा है. कहने को इनके लिए वन अधिकार का कानून भी बना, पर जिसके लिए कानून बना उसे ही इसका लाभ नहीं मिल रहा है. उन्हें जलावन की लकड़ी नहीं लाने दी जाती है, जबकि इनकी रोजी-रोटी का एक बड़ा साधन लकड़ी काट कर बेचना ही है. वनों से लघु उपज व जड़ी-बूटी तक लाने पर रोक है, जबकि दुर्गम और पथरीले रास्ते वाले दोन इलाके के लोगों के लिए जड़ी-बूटी एक आवश्यक वस्तु है. दुरूह रास्ता होने के कारण इन्हें चिकित्सकीय सहायता तुरंत नहीं मिल पाती है. ऐसे में इसी से वे अपना उपचार करते हैं. ठोरी में नदी से पत्थर का उत्खनन नहीं होने से स्थानीय लोग बेरोजगार हो रहे हैं. इससे 12 हजार परिवार प्रभावित हैं.

बिहार के पश्चिम चंपारण स्थित बगहा, रामनगर, गौनाहा, मैनाटांड़ प्रखंडों में थारू व अन्य आदिवासी बहुल लगभग 260 गांव हैं. इनकी कुल आबादी लगभग पौने चार लाख है. इन इलाक़ों में रहने वाले 80 फीसदी लोग भूमिहीन हैं. थारू को आदिवासी घोषित करने के लिए लंबी लड़ाई लड़ी गई. 2003 में सफलता मिली, जब सरकार ने इन्हें एसटी का दर्जा दिया.

इस श्रेणी में आने के बावजूद वे आजतक न सिर्फ अधिकारों और सुविधाओं से वंचित हैं, बल्कि उनपर दमन चक्र भी चल रहा है. जंगल से जुड़े होने के बावजूद एक साज़िश के तहत सरकारी विभाग ने उन्हें इसके लाभ से वंचित रखा. परिणामस्वरूप वन विभाग और आमलोगों के बीच में टकराहट बढ़ने लगी. मुकदमों का दौर शुरू हो गया. स्थानीय निवासियों का कहना है कि एक समय बेतिया और रामनगर राज में जंगल से रैयती हक (परमिट) मिलता था. उन्हें सूखी लकड़ियां काटने की छूट थी. वे जंगल से त्रिफला लाते थे, लेकिन आज रोक लगा दी गई है.

हजारों साल से जंगलों और वन्य प्राणियों को थारू, उरांव व अन्य वनवासी बचाते चले आए हैं. इसका प्रमाण ये है कि वर्ष 1989-90 में यहां के जंगलों में 85 बाघ थे, लेकिन व्याघ्र परियोजना लागू होने के बाद जब बाघों की रखवाली वन विभाग ने शुरू की, तो बाघों की संख्या कम होती चली गई. हालांकि, विभाग बाघों की संख्या में इज़ाफा होने का दावा कर रहा है, लेकिन इन दावों और आंकड़ों में काफी अंतर है. इतना ही नहीं, पहले जंगली खजूर को वन विभाग ने खत्म किया, अब ग्रासलैंड विकसित करने के नाम पर सफेद मूसली, आंवला, हर्रे-बहेड़ा जैसी जड़ी-बुटियों को खत्म करने की 93 लाख रुपए की योजना बनाई गई है. हाल में थरूहट और दोन इलाके में रह रहे वनवासियों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति पर बिहार शोध संवाद की एक टीम ने रिसर्च किया था. थारूओं व उरांवों के विरुद्ध वन विभाग साज़िश रच रहा है. उनके भोलेपन और ज़मीन से संबंधित कोई प्रमाण नहीं होने का फायदा उठाया जा रहा है. दोन से हरनाटांड़ जाने वाली सड़क पर भेलहवा दह के पास मगरमच्छ पालने की योजना है. यह योजना ज़मीन पर कब और कितनी कारगर होगी, यह तो पता नहीं, अलबत्ता मगरमच्छ संरक्षण के नाम पर यह रास्ता बंद करने की साज़िश ज़रूर रची जा रही है.

इसी प्रकार कई जगह थारूओं को तंग करने के लिए वन विभाग कर्मी लोगों की रैयती ज़मीन पर खंभे गाड़ रहे हैं, तो कहीं जेसीबी से गड्ढे खोदे रहे हैं. रिपोर्ट में इस बात का खुलासा किया गया है कि जंगल के राजस्व ग्रामों को बफर और पेरिफेरियल एरिया घोषित करने के लिए वन विभाग और प्रशासन षड्यंत्र रच रहा है. इसके लिए लोगों को डरा-धमका कर जबरन ग्राम सभाओं से प्रस्ताव पास कराने का प्रयास हो रहा है. यदि यह सफल हो जाता तो 152 गांवों के लोग विस्थापित हो जाते. पिछले बीस वर्षों से इस इलाके में किसानों की मालगुजारी रसीद राजस्व कर्मचारी नहीं काट रहे हैं. बैरिकेडिंग से सटे गांवों की स्थिति काफी बदहाल है. ■

feedback@chauthiduniya.com

विस्थापन का दंश झेलते थारू आदिवासी

अखिल भारतीय थारू कल्याण महासंघ के नेता हेमराज प्रसाद ने बताया कि वनकर्मियों की नीयत का पता इसी से लगता है कि लकड़ी काटने व तस्करी के मामले में भतुजला के कपिलदेव उरांव पर एक मुकदमा 2011 में वन विभाग ने दर्ज कराया था, जबकि उनकी मौत पांच साल पूर्व ही हो चुकी थी. इसी प्रकार रघई उरांव नामक व्यक्ति पर वनकर्मियों ने 80 मुकदमा दर्ज कराया. एक अनुमान के अनुसार, अब तक लगभग 400 लोगों पर फ़र्ज़ी मुकदमे दर्ज हो चुके हैं. इधर, थारूओं के एक अन्य नेता शैलेंद्र गढ़वाल बताते हैं कि दोन इलाके में 24 गांव रेवेन्यू ग्राम हैं. यहां पहुंचने के लिए बीहड़ जंगलों के बीच से होकर गुजरना पड़ता है. बरसात में चार महीने यहां का रास्ता अवरुद्ध रहता है. पक्का रास्ता बनाने नहीं दिया जाता है. पहले यहां के लोग जंगलों से जड़ी-बुटी लाकर अपना पेट पालते थे. अब वे पलायन कर पंजाब, दिल्ली जाने को मजबूर हैं. यहां की खेती भउड़ी (आहर-पाईन) पर निर्भर है. उसे भी प्रतिबंधित करने की बात चल रही है.

जानकारी के अनुसार वन विभाग ने केंद्र सरकार को रिपोर्ट भेजी थी कि यहां के स्थानीय लोगों के कारण ही बाघों, पशु-पक्षियों की संख्या घट रही है. ये लोग कोर एरिया में प्रवेश कर लकड़ी काटते हैं, बैरिकेडिंग तोड़ कर जंगल में घुस आते हैं. ये लोग तस्करी के धंधे में भी लिप्त हैं, इसलिए इन्हें इस क्षेत्र से हटाया जाए. वाल्मीकि प्रोजेक्ट टाइगर के निदेशक सह संरक्षक संतोष तिवारी का कहना है कि यहां के निवासियों को कोई पारंपरिक अधिकार नहीं है. हम उनकी समस्याओं के निदान के लिए ही प्रयासरत हैं. सुप्रीम कोर्ट के गाइडलाइन व प्रोटेक्शन एक्ट को अमल में लाना हमारी मजबूरी है. अगर कोई जंगली सूअर को मारे, ज़बरदस्ती जंगल में घुस कर लकड़ी काटे तो ऐसे लोगों पर मुकदमा किया जाएगा. अब इसे कोई फ़र्ज़ी केस कहे, तो हम क्या कर सकते हैं. दूसरी ओर, इस इलाके के लोगों की मांगें हैं कि वनाधिकार कानून एफआरए 2006 को लागू किया जाए, ताकि जंगल के सह उत्पादों को लाने का अधिकार मिल सके. इसके साथ-साथ इलाके को शेड्युल 5 घोषित किया जाए, ताकि आदिवासियों की ज़मीन को दूसरा कोई खरीद न सके. इन्हीं मांगों को लेकर पिछले कई साल से थारूओं का संगठन आंदोलनरत है, लेकिन प्रशासन अभी तक नींद में है. इस स्थिति के कारण अब थारूओं और वन विभाग के बीच टकराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी है. हाल में टाइगर रिजर्व के जंगल से गुजरी पहाड़ी नदी से पत्थर व बालू निकालने व जलावन की लकड़ी काटने से रोकने पर वनवर्ती गांव महदेवा के ग्रामीणों ने वन विभाग के अधिकारियों व कर्मियों को तीन घंटे तक बंधक बनाए रखा. ग्रामीणों ने आरोप लगाया कि वनकर्मियों के संरक्षण में वन क्षेत्र से पत्थर लाकर तोड़ा जाता है. यदि ग्रामीण महिलाएं जंगल से सूखा जलावन लाती हैं, तो वनकर्मी उन्हें बेवजह परेशान करते हैं. ■

वैध खनन बंद, अवैध खनन जारी

राणा अवधूत कुमार/रोहतास

नीतीश कुमार पिछले कुछ वर्षों से बिहार में उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए हरसंभव प्रयास करते दिख रहे हैं. देश-विदेश के नामी-गिरामी उद्योगपतियों, निवेशकों और वैश्विक बैंकों के सीईओ पटना का दौरा कर वस्तुस्थिति का जायजा ले रहे हैं. वैसे धरातल पर निवेश के कुछ स्पष्ट आसार अभी नहीं दिख नहीं रहे हैं, संभव हो इसका फायदा निकट भविष्य में दिखे. यह दुर्भाग्य की बात है कि बिहार के एक जिला रोहतास के करवंदिया-बांसा खनन क्षेत्र में लाखों मजदूर सरकारी नीतियों के आगे घुटने टेकने को मजबूर हैं. एक तरफ सूबे के मुखिया द्वारा रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने की वैश्विक कोशिश, तो वहीं अपने घर में बसे-बसाये स्थानीय पत्थर-बालू उद्योगों का पूरी तरह से सफाया करने पर आमादा सरकार.

यह एक स्याह सच है कि रोहतास जिले के खनन व्यवसायियों ने सारे नियमों, कायदे-कानूनों को ताक पर रखकर न सिर्फ अवैध खनन किया, बल्कि पर्यावरण के मानकों का भी जमकर उल्लंघन किया. लेकिन यह सच भी उतना ही कड़वा है कि पुलिस-प्रशासन व स्थानीय अधिकारियों ने पत्थर माफिया के साथ मिलकर इस प्राकृतिक संपदा को लूटने में कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखी. पर्यावरण एवं वनों को बचाने का जायज तर्क देकर सरकार अगर इस धंधे को बंद करना चाहती है, तो यहां सवाल यह भी उठता है कि इसे बंद करने के बाद उन सैकड़ों विस्थापित व्यवसायियों और मजदूरों का क्या होगा, जो इससे अपने परिवार का पेट पालते थे. आज उनमें से अधिकतर बेकार हैं.

पिछले 20 वर्षों से रोहतास के जिला पत्थर खदानों में चल रहे पत्थरों एवं सरकारी राजस्व की लूट को समझने के लिए थोड़ा फ्लैश बैक में जाना जरूरी है. अवैध खनन को लेकर विभिन्न मंचों पर गंभीर चर्चा होती रही है. विधानसभा-विधान परिषद में इसे लेकर कई बार हल्ला-हंगामा हुआ है. कैमूर पहाड़ी के 80 एकड़ में फैले करवंदिया खदान क्षेत्र में हो रहे अवैध खनन का मामला तब चर्चा में आया, जब 2001 में तत्कालीन वन एवं पर्यावरण मंत्री जगदानंद सिंह ने सेंचुरी एरिया को बचाने के लिए पहाड़ में खनन को बंद करने का फरमान जारी किया. इसके बाद पूर्व विधायक रामेश्वर चौरसिया, प्रदीप जोशी, ज्योति रश्मि सहित कई विधायकों ने अवैध खनन के मामले को विधानसभा में बार-बार उठाया. स्थानीय प्रशासन, वन विभाग और पत्थर माफिया के नापाक गठजोड़ से चलने वाला यह गोरखधंधा राष्ट्रीय स्तर पर तब सुर्खियों में आया, जब अवैध खनन रोकने के क्रम में 2002 में युवा-जांबाज डीएफओ संजय सिंह पत्थर माफिया के शिकार हो गए. उनकी मृत्यु के बाद आनन-फानन में सारे क्रशर और वैध खदान बंद कर दिए गए. लेकिन दो वर्ष बाद ही करवंदिया-बांसा का क्षेत्र बारूद की आवाज से एक बार फिर दहलने लगा. पुलिस और कुछ स्थानीय अधिकारियों की मिलीभगत से अवैध खनन का कारोबार एकबार फिर फलने-फूलने लगा. आज हाल ये है कि सरकार और प्रशासन की लाख दबिशों के बावजूद खनन आज भी जारी है.

खान एवं भूतत्व विभाग के आदेश पर 2006 में एक बार फिर सख्त कायदे-कानूनों के साथ क्रशर चलने लगे. इसके तहत 20 वर्षों का कर चुकाने के बाद 387 क्रशर उद्यमियों को मशीन चलाने की अनुमति दी गयी. यह और बात है कि उन कठोर नियमों का पालन व्यवसायियों ने मनमाफिक तरीके किया, फिर चाहे वह प्रदूषण विभाग हो या सेल टैक्स या फिर खनन विभाग. जाली चालान बनाकर यह धंधा बदस्तूर जारी रहा, जिसमें सरकारी राजस्व की जमकर चोरी की गई. स्थानीय अधिकारियों की मिलीभगत से अवैध खनन का धंधा इतना अधिक फला-फूला कि देखते-देखते कई लोग करोड़पति हो गए. इनमें से कइयों ने पैसे के दम पर विधानसभा और जिला परिषद का चुनाव लड़ा और जीता. यह और बात है कि इनमें से कइयों की आर्थिक स्थिति खराब होती जा रही है. हालांकि एक दौर वह भी था, जब पूर्व विधायक सुनील पांडेय, हुल्लास पांडेय, प्रदीप जोशी, राज्यसभा सांसद गोपाल नारायण सिंह, डालमिया, टहलानी, अनिल यादव समेत कई लोगों ने सियासत चमकाने के लिए अवैध खनन से ना सिर्फ काली कमाई की, बल्कि इसे प्रोत्साहित भी किया. इनमें से राज्यसभा सांसद सहित कई लोगों पर आज भी आपराधिक मुकदमे चल रहे हैं. कई अधिकारियों को अदालती कार्रवाई के लिए प्रतिमाह किसी न किसी तारीख को सासाराम कोर्ट में हाजिरी लगानी पड़ती है.

खनन पट्टेधारियों की हिम्मत का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि इस कार्य में सरकारी आदेशों की जमकर अवहेलना की गयी. खनन नियमों के तहत प्रावधान है कि आवंटित पट्टे में भूमि से 20 फीट तक ही खुदाई हो सकती है, लेकिन खननधारियों ने कई खदानों में 400 फीट गहराई तक खुदाई करवायी. उस समय भी अवैध खनन से संबंधित खबरें लगातार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही, लेकिन सरकार ने कभी इसे गंभीरता से नहीं लिया. तब सासाराम के एक स्थानीय पत्रकार ने स्टिंग ऑपरेशन कर पहली मर्तबा अवैध डेटोनेटर के प्रयोग का खुलासा किया. उस वक्त सासाराम के कंचनपुर से भारी मात्रा में डेटोनेटर बरामद किया गया था. उसके बाद से आजतक हर महीने छापेमारी में अवैध डेटोनेटर सहित खनन से जुड़े अवैध उपकरणों, वाहनों की जब्ती एवं बरामदगी होती रही है. स्थानीय प्रशासन, खान एवं भूतत्व विभाग की छापेमारी और धरपकड़ की कार्रवाई आजतक बदस्तूर जारी है. लाख कोशिशों के बावजूद अवैध खनन नहीं रुका है. इस बहाने सरकार को करोड़ों रुपए राजस्व की क्षति जरूर हुई.

अहम सवाल यह उठता है कि अवैध खनन की कीमत पर विकास करना कहां तक जायज है और जब बात पर्यावरण की हो तो मामला और भी गंभीर हो जाता है. इससे जुड़े उन लाखों मजदूरों का क्या होगा जो बेरोजगार हो गए हैं. दूसरी बात यह कि योजनाओं को धरातल पर पहुंचाने के लिए गिट्टी और पत्थर कहां से मिलेगा? कल तक स्थानीय प्रशासन तक सिमट कर रहनेवाला करवंदिया के अवैध खनन का मामला आर्थिक अपराध शाखा के पास चला गया है. आम जनता इस गलतफहमी में है कि पत्थर उद्योग से जुड़े लोग बड़े घराने से हैं, जबकि हकीकत यह है कि इस धंधे से अवैध कमाई करनेवालों की संख्या महज सौ-डेढ़ सौ है, जबकि करीब एक लाख मजदूर अपनी जीविका चलाने के लिए इस पेशे में आये थे. 2012 से जिले में क्रशरों को बंद करने और लीज पर दिये गये पट्टों को रद्द करने की प्रक्रिया शुरू हुई, 2014 आते-आते सभी क्रशर मशीनों को अवैध घोषित कर दिया गया. लेकिन हकीकत यह है कि खनन का यह खेल आज भी चोरी-छिपे रात के अंधेरे में प्रशासनिक संरक्षण में इत्मीनान से चल रहा है. मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की हालिया निश्चय यात्रा और चेतना सभा की मीटिंग के दौरान नीतीश कुमार ने प्रशासन पर लगाम कसा है. जोनल आईजी ने डेहरी में बैठक कर सभी पुलिस पदाधिकारियों को कड़ी कार्रवाई करने को कहा, नहीं करने पर अंजाम अंजाम भुगतने की चेतावनी भी दी. इसका नतीजा यह हुआ कि एक सप्ताह पूर्व ओवरलोडिंग एवं अवैध खनन से जुड़े 350 से भी अधिक गिट्टी-पत्थर लदे ट्रकों को जब्त किया गया. साथ ही, अवैध खनन में संलिप्तता को लेकर जिले के एक वरीय पुलिस पदाधिकारी एवं चार थानाध्यक्षों पर विभागीय कार्रवाई शुरू की गई.

इन परिस्थितियों में हजारों विस्थापित मजदूरों के पुनर्वास के लिए सरकार के पास कोई योजना है भी या नहीं? इस पर स्थानीय प्रशासन समेत पटना के आला अधिकारी यहां तक कि विभागीय मंत्री भी कुछ बोलने से परहेज कर रहे हैं. ऐसे में सवाल यह है कि क्या सुशासन की सरकार में सबको जीने-कमाने का हक नहीं है. ■

feedback@chauthiduniya.com

बिहार

अवैध खनन से संबंधित अधिकारियों की प्रतिक्रिया

अवैध खनन मामले में पर्यावरण की क्षति एवं राजस्व के भारी नुकसान के मद्देनजर क्रशर मशीनों का चलना अवैध कार्य का संकेत देता है. जबतक खनन पट्टों को लीज पर देन की प्रक्रिया नहीं होगी, तब तक यहां खनन अवैध कार्य माना जाएगा. क्रशर अनुज्ञप्तिधारक दूसरे स्थानों से रॉ मैटेरियल लाने, नियमों का पालन करने का भरोसा देकर क्रशर संचालित कर सकते हैं, उन्हें प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के मानक नियमों का पालन करना होगा.

-अनिमेश कुमार पाराशर, *जिलाधिकारी, रोहतास.*

रोहतास के करवंदिया-बांसा खनन क्षेत्र में नियमों के तहत क्रशर संचालक क्रशर मशीन चला सकते हैं. अवैध खनन में शामिल किसी व्यक्ति को बख्शा नहीं जाएगा, चाहे वह कितना भी प्रभावशाली क्यों न हो? कई मौकों पर नक्सलियों और पत्थर माफिया के सांठ-गांठ होने के सबूत मिले हैं. इस स्थिति में अवैध खनन को रोकने के लिए पुलिस प्रतिबद्ध है.

-मानवजीत सिंह ढिल्लो, *पुलिस अधीक्षक, रोहतास.*

2001 में वन भूमि, पहाड़, जंगलों को बचाने और सेंचुरी एरिया को संरक्षित रखने के लिए करवंदिया-बांसा क्षेत्र में अवैध खनन को बंद किया गया था. हाईकोर्ट के आदेश पर तत्कालीन डीएफओ संजय सिंह ने अवैध खनन पर शिकंजा कसना शुरू किया तो पत्थर माफिया ने उनकी हत्या करवा दी. उस समय खनन क्षेत्र से महज कुछ लाख ही सरकारी खजाने में आता था. इसमें सुधार होना चाहिए. कुछ पहाड़ी क्षेत्रों की कोई उपयोगिता नहीं है, जिन्हें लीज पर खनन को दिया जाना चाहिए, ताकि स्थानीय लोगों को रोजगार मिल सके.

-जगदानंद सिंह, *पूर्व मंत्री सह सांसद.*

www.kamalmorarka.com

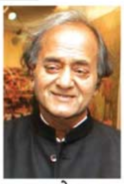
कमल मोरारका

नोटबंदी से पैदा अव्यवस्था अब ठीक हो रही है, क्योंकि अब शायद 500 रुपए के नोट उपलब्ध हो गए हैं. मार्च तक रही-सही कमी भी पूरी हो जाएगी. दरअसल यह पता नहीं लगाया जा सकता है कि नोटबंदी का फैसला सही था या गलत, ज़रूरी था या गैर-ज़रूरी, क्योंकि इसके कारण और प्रभाव (कॉज एंड इफेक्ट) जानने का कोई पैमाना नहीं है. एक बात जो तय है, वह यह है कि प्रधानमंत्री ने नोटबंदी के लिए जो तीन कारक (नकली नोट, कालाधन और आतंकवाद खत्म करना) बताए थे, वो इतने बड़े क़दम के लिए बहुत ही छोटे और कमज़ोर कारक थे. प्रधानमंत्री के पक्ष में बात करते हुए मैं कह सकता हूं कि यदि वो यह क़दम उठाना ही चाहते थे, तो उन्हें यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए था कि विमुद्रीकरण से पहले रिज़र्व बैंक में पर्याप्त नोट मौजूद हों. ऐसा क्यों नहीं हुआ, यह अब एक रहस्य है.

ग़ैर-ज़िम्मेदारी की कोई सीमा नहीं होती

चुनाव आयोग द्वारा पार्टी का नाम और चुनाव चिन्ह अखिलेश यादव के धड़े को दिए जाने के बाद समाजवादी पार्टी में पिछले कुछ हफ़्तों से जारी अंदरूनी झगड़ा समाप्त होता दिख रहा है. अब ऐसा लग रहा है कि मुलायम सिंह यादव अलग चुनाव लड़ना नहीं चाहते हैं, जो अच्छी बात है, क्योंकि ऐसा करने से उनके वोट नहीं बंटेंगे. अंदरूनी झगड़े किसी भी पार्टी को नुकसान पहुंचाते हैं. यदि समाजवादी पार्टी ने अपने झगड़े कुछ हफ्ते पहले सुलझा लिए होते, तो अच्छा होता. बहरहाल, जो होना था, वो हो चुका है. अब उत्तर प्रदेश चुनाव में जो तस्वीर नज़र आ रही है, उसमें बसपा, भाजपा और सपा-कांग्रेस-अजित सिंह के गठबंधन के बीच मुकाबला होगा. ज़ाहिर है, जब तक नामांकन दाखिल नहीं हो जाता और चुनाव प्रचार शुरू नहीं हो जाता, तब तक कुछ कहा नहीं जा सकता है. उत्तरप्रदेश में यह बात की जा रही है कि सत्ता और विपक्ष के लोग आश्वस्त हैं कि नोटबंदी का फायदा उन्हें ही मिलने वाला है. भाजपा सोचती है कि नोटबंदी से गरीब इतने खुश हैं कि वे भाजपा को ही वोट देंगे. विपक्ष यह सोचता है कि नोटबंदी ने उत्तर प्रदेश में भाजपा की संभावनाओं को समाप्त कर दिया है. बहरहाल, चुनाव पूर्व की बात कौन करे, चुनाव के बाद भी यह कहना मुश्किल होगा कि नोटबंदी का प्रभाव चुनाव पर पड़ा या नहीं.

उत्तरप्रदेश देश का सबसे बड़ा प्रदेश है और लोकसभा चुनाव में भाजपा-अपना दल गठबंधन ने राज्य की 80 लोक सभा सीटों में से 73 सीटें जीती थी. बाक़ी सीटें मुलायम सिंह यादव परिवार और कांग्रेस के खाते में गई थीं. यदि भाजपा की जो लोकप्रियता लोकसभा चुनाव के दौरान थी, वही अब भी कायम है (हालांकि इसमें शक है) तो तार्किक रूप से 73 को 5 गुणा करने के बाद जो अंक आएगा, वही विधानसभा चुनाव में भाजपा की संख्या होनी चाहिए. हालांकि भाजपा के लोगों को भी शक है कि उन्हें फिर से वैसा समर्थन मिलेगा. यह देखना दिलचस्प होगा. कांग्रेस का वोट शेयर 8 प्रतिशत था. उसके जुड़ जाने से निश्चित रूप से सपा को मजबूती मिलेगी, क्योंकि 8 प्रतिशत वोट बहुत मायने रखता है. यदि यह वोट सपा के वोट के साथ मिल जाता है, तब यह और प्रभावी हो जाएगा. बसपा का अपना वोट बैंक है. दलित उसके साथ हैं. मुस्लिम उसके साथ जाते हैं या सपा-बसपा के बीच बंट जाते हैं, इसके लिए और इंतज़ार करना होगा.

नोटबंदी से पैदा अव्यवस्था अब ठीक हो रही है, क्योंकि अब शायद 500 रुपए के नोट उपलब्ध हो गए हैं. मार्च तक रही-सही कमी भी पूरी हो जाएगी. दरअसल यह पता नहीं लगाया जा सकता है कि नोटबंदी का फैसला सही था या गलत, ज़रूरी था या गैर-ज़रूरी, क्योंकि इसके कारण और प्रभाव (कॉज एंड इफेक्ट) जानने का कोई पैमाना नहीं है. एक बात जो तय है, वह यह है कि प्रधानमंत्री ने नोटबंदी के लिए जो तीन कारक (नकली नोट, कालाधन और आतंकवाद खत्म करना) बताए थे, वो इतने बड़े क़दम के लिए बहुत ही छोटे और कमज़ोर कारक थे. प्रधानमंत्री के पक्ष में बात करते हुए मैं कह सकता हूं कि यदि वो यह क़दम उठाना ही चाहते थे, तो उन्हें यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए था कि विमुद्रीकरण से पहले रिज़र्व बैंक में पर्याप्त नोट मौजूद हों. ऐसा क्यों नहीं हुआ, यह अब एक रहस्य है. यदि इसका रहस्योद्घाटन होता है, तो अच्छी बात है. शायद नोटबंदी का फैसला अचानक ले लिया गया या शायद यह फैसला केवल 1000 रुपए के नोट के

> मैं समझता हूं कि जो लोग संसद को समझते हैं, वे अब भी ठीक व्यवहार कर रहे हैं. भाजपा के सदस्य नरेन्द्र मोदी और अमित शाह का शह पाकर गैर-जिम्मेदाराना बयान जारी कर रहे हैं और देश में संवाद के स्तर को नीचे ला रहे हैं, जो सही संकेत नहीं है. मेरा मानना है कि चुनाव को बीत जाने देना चाहिए और बहस के स्तर को फिर से परिपक्व बनाना चाहिए, जिसमें शोर-शराबा कम हो. एक दूसरे पर चिल्लाने से, एक दूसरे के लिए अपशब्द इस्तेमाल करने से किसी समस्या का समाधान नहीं होगा. हमें आशा करनी चाहिए कि चीज़ें बेहतर होंगी.

लिए था, जिसके लिए 2000 रुपए के नोट पहले से ही छप चुके थे. हो सकता है कि बिना पर्याप्त नोटों की व्यवस्था के ही 500 रुपए के नोट बंद करने का फैसला प्रधानमंत्री ने अचानक ले लिया हो, जिसकी वजह से अमीरों और कालाधन वालों के बजाय आम आदमी को अधिक मुसीबत का सामना करना पड़ा. 500 के नोट की जरूरत सब्जी बेचने वाले, दूध वाले, दिहाड़ी मजदूर से लेकर

आम आदमी सबको होती है. नोटबंदी से सबसे अधिक प्रभावित दिहाड़ी मजदूर थे क्योंकि उनके पास बैंक अकाउंट नहीं होता और न ही कैशलेस रहने के लिए प्लास्टिक कार्ड होता है. तात्कालिक रूप से वो बहुत अधिक तनाव में रहे.

किसान भी बैंक से लेन-देन के आदि नहीं हैं. वे अपना लेन-देन कैश में करते हैं, लिहाज़ा उन्हें भी परेशानी में डाला गया. किसानों पर इसका वास्तविक परिणाम क्या होगा, यह आने वाला समय बताएगा. सरकार दावा कर रही है कि इस साल खेतों की बुआई अधिक हुई है. यदि बुआई अधिक हुई है, तो यह निश्चित रूप से अच्छी खबर है. किसानों ने ज़रूर कोई नया तरीका अपनाया होगा, साधारण क़र्ज़ या कोई अनौचारिक ऋण लिया होगा, जिसकी वजह से वे अपनी बुआई कर पाए होंगे. यह अर्थशात्रियों के बहस का विषय है, जो लंबे समय तक चल सकता है. जहां तक आम आदमी का सवाल है, तो यदि ये नोट फिर से उपलब्ध हो जाएं तो उसकी समस्या समाप्त हो जाती है. सरकार कालाधन, नकली नोट और आतंकवाद से निपटती रहे, इससे आम आदमी के रोजाना के लेन-देन पर कोई फर्क नहीं पड़ता.

ख़बरों के मुताबिक, आरबीआई गवर्नर संसदीय समिति के समक्ष पेश हुए हैं. समिति ने नोटबंदी पर उनसे तीखे सवाल पूछे. संसदीय समिति एम्पावर्ड समिति होती है. उसकी कार्यवाही आदि कैमरे में कैद होती है, प्रेस के लिए नहीं होती, यानी उसकी विषयवस्तु गोपनीय होती है. बहरहाल हर चीज़ की एक सीमा होती है, जिसे पार नहीं किया जा सकता है. संसद ऐसे सवाल नहीं कर सकती, जिनका जवाब गोपनीय हो, जिसकी जानकारी केवल गोपनीयता की शपथ ली हुई सरकार को होती है. अगर कोई संसद के प्रति जवाबदेह है तो वो संसदीय समिति के प्रति भी जवाबदेह होगा. मुझे यह पढ़ कर ख़ुशी हुई कि मनमोहन सिंह ने आरबीआई गवर्नर को सतर्क किया कि उन्हें इन सवालों का जवाब नहीं देना चाहिए. मनमोहन सिंह आरबीआई के गवर्नर रहे हैं, वित्त मंत्री रहे हैं और दस साल के लिए प्रधानमंत्री रहे हैं, उन्हें इसकी जानकारी है. आखिरकार यह देश सबका है. भले ही हमारे प्रधानमंत्री बहुत एडवेंचरस (उत्साही) हैं, जैसे ही वो माइक देखते हैं भाषण देना शुरू कर देते हैं, जैसे वे देश को बदलने जा रहे हों. जानकार लोग बदलाव की सीमा को समझते हैं, जैसा कि नानी पालकीवाला ने बजट पर अपनी प्रतिक्रिया देते हुए एक बार कहा था कि बुद्धिमता की एक सीमा होती है, गैर ज़िम्मेदारी की कोई सीमा नहीं होती. मनमोहन सिंह एक बुद्धिमान व्यक्ति हैं, उन्होंने आरबीआई गवर्नर को सतर्क किया है, आखिरकार मौजूदा गवर्नर पहले गवर्नर नहीं हैं. उनसे पहले 20-30 गवर्नर आ चुके हैं और उनके बाद भी आएंगे. सवाल यह है कि रिज़र्व बैंक की स्वायत्तता, गोपनीयता और शुचिता हर कीमत पर बचाए रखनी होगी.

मैं समझता हूं कि जो लोग संसद को समझते हैं, वे अब भी ठीक व्यवहार कर रहे हैं. भाजपा के सदस्य नरेन्द्र मोदी और अमित शाह का शह पाकर गैर-जिम्मेदाराना बयान जारी कर रहे हैं और देश में संवाद के स्तर को नीचे ला रहे हैं, जो सही संकेत नहीं है. मेरा मानना है कि चुनाव को बीत जाने देना चाहिए और बहस के स्तर को फिर से परिपक्व बनाना चाहिए, जिसमें शोर-शराबा कम हो. एक दूसरे पर चिल्लाने से, एक दूसरे के लिए अपशब्द इस्तेमाल करने से किसी समस्या का समाधान नहीं होगा. हमें आशा करनी चाहिए कि चीज़ें बेहतर होंगी. ■

feedback@chauthiduniya.com

सिन्हा रिपोर्ट कश्मीर की असल तस्वीर पेश करती है

शुजात बुखारी

कश्मीर की वास्तविक स्थिति पर प्रबुद्ध नागरिकों के एक ग्रुप ने, जिनका संबंध सरकार से नहीं है, एक रिपोर्ट जारी की है. यह रिपोर्ट ऐसे समय आई है, जब सरकार की ओर से न तो घाटी में जारी हिंसा को स्वीकार किया जा रहा है और न ही नागरिकों के मारे जाने पर कोई दुख व्यक्त किया जा रहा है. अतीत में कश्मीर का दौरा करने वाले प्रतिनिधिमंडलों ने ऐसी रिपोर्ट बनाई थी, जो सरकार के लिए सुविधाजनक हो. वहीं, पूर्व विदेश मंत्री यशवंत सिन्हा के नेतृत्व में जागरूक नागरिकों के इस ग्रुप ने 10 दिसंबर को अपने दूसरे दौरे के दौरान कश्मीर के विभिन्न हिस्सों का भ्रमण कर, जो कुछ भी देखा, उसकी वास्तविक तस्वीर सबके सामने रख दी. इस समूह में यशवंत सिन्हा के अलवा अल्पसंख्यक आयोग के पूर्व अध्यक्ष वजाहत हबीबुल्ला, एयर वाइस मार्शल (सेवानिवृत्त) कपिल काक, विख्यात पत्रकार भारत भूषण और सामाजिक कार्यकर्ता सुशोभा बर्वे शामिल थे. इस बार भी ग्रुप के सभी सदस्यों ने अपनी यात्रा के लिए किसी संस्था या सरकार से आर्थिक सहायता नहीं ली. उन्होंने यात्रा का पूरा खर्च खुद उठाया, ताकि उसकी विश्वसनीयता पर कोई सवाल खड़ा न हो सके.

ग्रुप ने पहले अक्टूबर में श्रीनगर का दौरा तब किया था, जब यहां जारी विरोध-प्रदर्शनों के समाप्त होने की कोई संभावना नज़र नहीं आ रही थी और संयुक्त हुर्रियत नेतृत्व दिल्ली से आने वाले लोगों से दूरी बनाए था. सितंबर 2016 में सीताराम येचुरी की अगुवाई में गए सांसदों के एक समूह के लिए वरिष्ठ अलगाववादी नेता सैयद अली शाह गिलानी ने अपने दरवाजे बंद कर दिए थे, वहीं यशवंत सिन्हा की टीम की बातें ध्यान से सुनीं और यह इशारा दिया कि वे बातचीत के खिलाफ नहीं हैं. मीरवाइज उमर फारूक का मामला भी लगभग वैसा ही था. यह ब्रेकथ्रू इस लिहाज़ से महत्वपूर्ण है कि दिल्ली की भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) सरकार कश्मीर में जारी राजनीतिक उबाल से इनकार करती रही है. यशवंत सिन्हा, जिनका संबंध भाजपा से है, ने हुर्रियत नेताओं से मुलाकात करने में कामयाबी हासिल की. हुर्रियत मौजूदा राजनीतिक संकट के दौरान एक प्रमुख हितधारक के रूप में उभरा है. यशवंत सिन्हा के ग्रुप की इस घोषणा के बाद कि वे सरकार द्वारा नहीं भेजे गए हैं, हुर्रियत से बातचीत के दरवाज़े खुल गए. हालांकि संयुक्त हुर्रियत नेतृत्व में शामिल यासीन मलिक इनसे दूर रहे.

दूसरे दौरे के बाद यशवंत सिन्हा के नेतृत्व वाले ग्रुप ने अपनी रिपोर्ट सार्वजनिक की, जिसपर श्रीनगर से लेकर दिल्ली तक चर्चा हो रही है. रिपोर्ट में वही लिखा गया है, जो छह महीने की अशांति के दौरान ग्राउंड रिपोर्ट में कहा जा रहा था. उसमें कोई बदलाव नहीं किया गया. इसकी वजह यह भी हो सकती है कि शायद वे अपनी विश्वसनीयता बढ़ाना चाहते हों. इस ग्रुप से उत्तर से लेकर दक्षिण कश्मीर तक लोगों ने जो कुछ कहा, रिपोर्ट में शब्दशः शामिल किया गया है और वास्तविक परिप्रेक्ष्य को सामने लाया गया है. यह आशंका ज़ाहिर करते हुए कि अप्रैल 2017 में हालात फिर से बिगड़ सकते हैं, रिपोर्ट में यह निष्कर्ष निकाला गया है कि भारत के खिलाफ यहां नफरत बढ़ी है, विशेष रूप से युवाओं में. रिपोर्ट के मुताबिक, अपनी पीड़ा के प्रति भारत की उदासीनता को देखते हुए, ऐसे लोग जो यह समझते थे कि भारत रहने के लिए एक बेहतर जगह है, खुद को इस विचार से दूर कर लिया है.

यह रिपोर्ट दिल्ली से आने वाली किसी भी टीम की एक महत्वपूर्ण स्वीकारोक्ति है. पूर्व में सरकारी और गैर-सरकारी दोनों स्तरों के संवाद में ईमानदारी नहीं बरती गई थी, जिसकी वजह से इस तरह के संवाद प्रक्रिया की विश्वसनीयता कमज़ोर हो गई. मिसाल के तौर पर, रिपोर्ट में कहा गया है कि जिस तरह युवाओं की शब्दावली बदल चुकी है, उसी तरह भारत के प्रति उनका मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण भी बदल चुका है. वे कर्फ्यू, हड़ताल, शहादत और बुरहान (वानी) की बात करते हैं. रिपोर्ट के मुताबिक, नई दिल्ली की वजह से कश्मीरी भारत में और संवाद में अपना विश्वास खो चुके हैं. यह रिपोर्ट कश्मीर में जारी संघर्ष पर हर तरह की राय रखने वाले लोगों से बातचीत के बाद तैयार की गई है. लोगों की मांग है कि कश्मीर समस्या का व्यापक समाधान हो, जो उनके मुताबिक़ स्थानीय दलों के बस में नहीं है, क्योंकि इसकी जटिलता की जड़ें उनकी सीमाओं से परे जाती है. रिपोर्ट में कहा गया है कि कश्मीरी यह मानते हैं कि राज्य के स्थानीय दल कश्मीर की राजनीतिक समस्या को हल नहीं कर सकते हैं. उनका मानना है कि इस जटिल मुद्दे का समाधान सभी हितधारकों, भारत, पाकिस्तान और पूर्व जम्मू-कश्मीर राज्य के कश्मीरियों द्वारा तलाश किया जाना है. उनके मुताबिक जब तक ये तीनों मुद्दे के समाधान में शामिल नहीं होंगे, तब तक इसे सुलझाया नहीं जा सकता है.

> दिलचस्प बात यह है कि कट्टरपंथी संगठन दुख्तरान-ए-मिल्लत, जिनका नज़रिया इस तरह की किसी भी पहल के लिए सकारात्मक नहीं होता है, ने भी रिपोर्ट की तारीफ की है. उसने इसे तर्कसंगत और दिल्ली के लिए आंखें खोलने वाली रिपोर्ट करार दिया है. इसे ग्रुप द्वारा किए गए प्रयासों को आगे बढ़ाने के प्रेरक के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए. बहरहाल यशवंत सिन्हा के नेतृत्व वाले ग्रुप ने अभी तक सेल्फ-फंडेड (स्वयं वित्त पोषित) पहल के साथ न्याय किया है. इस ग्रुप को कश्मीर की हक़ीक़त से शेष भारत को भी अवगत कराना चहिए.

रिपोर्ट में इस बात पर भी जोर दिया गया है कि मिलिटेंट्स से भी बात करनी चाहिए, खास तौर पर हिजबुल मुजाहिदीन जैसे स्थानीय (इंडिजेनस) मिलिटेंट ग्रुप के प्रमुख सलाहुद्दीन से. इस संबंध में एक अनाम राजनेता के हवाले से यहां तक कहा गया है कि हुर्रियत भी अपनी ताक़त मिलिटेंट्स से हासिल करती है. लिहाज़ा सैयद अली शाह गिलानी या किसी अन्य नेता से बात करने से काम नहीं चलेगा. लोग हुर्रियत के साथ इसलिए हैं क्योंकि वह मिलिटेंट्स की भावना का प्रतिनिधित्व करती है. जिस दिन हुर्रियत इस भावना का प्रतिनिधित्व करना छोड़ देगी, तब वो बदल जाएगी. लिहाज़ा उन लोगों से बातचीत कीजिए जो यहां हिंसा के लिए ज़िम्मेदार हैं. इसका मतलब बातचीत में (गैरसरकारी तौर पर ही सही) हाफिज़ सईद को भी शामिल करना पड़ सकता है. आखिरकार हमारे बच्चे हाफिज़ सईद के दरवाजे पर ही तो जा रहे हैं.

संस्थागत सुधारों की पैरवी के अलावा, इस ग्रुप ने बातचीत के लिए दरवाजा खोलने, मानव अधिकारों की बहाली और युवाओं से संवाद स्थापित करने की वकालत की है. रिपोर्ट में भाजपा और पीडीपी गठबंधन के एजेंडे (एओए) का हवाला दिया गया है, जिसमें पाकिस्तान और हुर्रियत के साथ बातचीत की बात की गई है. ग्रुप ने जिन लोगों से बातचीत की, उन सभी ने कश्मीर मामले के समाधान के लिए पाकिस्तान से बातचीत को महत्वपूर्ण बताया. इन लोगों ने भारत को सीपीईसी (चाइना-पाकिस्तान आर्थिक कॉरिडोर) के साथ जुड़ने की भी बात की. बहरहाल, यशवंत सिन्हा के नेतृत्व वाले ग्रुप ने अपनी रिपोर्ट में जो भी परिलक्षित किया, वह दिल्ली में भाजपा सरकार द्वारा अक्सर दोहराए जाने वाले कथनों को नकारता है. इस रिपोर्ट ने यथास्थिति बनाए रखने वाले दृष्टिकोण की हवा निकालते हुए सरकार को कटघरे में खड़ा कर दिया है. किसी सरकार के लिए इस ग्रुप के नतीजों को नज़रअंदाज़ करना मुश्किल होगा.

दिलचस्प बात यह है कि कट्टरपंथी संगठन दुख्तरान-ए-मिल्लत, जिनका नजरिया इस तरह की किसी भी पहल के लिए सकारात्मक नहीं होता है, ने भी रिपोर्ट की तारीफ की है. उसने इसे तर्कसंगत और दिल्ली के लिए आंखें खोलने वाली रिपोर्ट करार दिया है. इसे ग्रुप द्वारा किए गए प्रयासों को आगे बढ़ाने के प्रेरक के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए. बहरहाल यशवंत सिन्हा के नेतृत्व वाले ग्रुप ने अभी तक सेल्फ-फंडेड (स्वयं वित्त पोषित) पहल के साथ न्याय किया है. इस ग्रुप को कश्मीर की हक़ीक़त से शेष भारत को भी अवगत कराना चहिए. ■

-लेखक राइजिंग कश्मीर के संपादक हैं.

feedback@chauthiduniya.com

संतोष भारतीय

जब तोप मुक़ाबिल हो

संघ अपनी विचारधारा से समझौता कर रहा है

कहते हैं, जब कोई समाजवादी तानाशाह बनता है तो बहुत घटिया तानाशाह बनता है. हालांकि कई तानाशाह ऐसे हुए हैं, जिनकी तारीफ हुई है, पर उनकी संख्या उंगलियों पर भी गिनने लायक़ नहीं है. दरअसल ये शुरुआत कुछ अजीब लग सकती है, लेकिन सभी आलोचनाओं के बावजूद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को हम उनकी अपनी विचारधारा में निहित नैतिकता के सवाल पर आलोचना के दायरे में नहीं ले सकते. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने अब तक अपनी विचारधारा के सांस्कृतिक पक्ष को कभी छुपाया नहीं और न ही उन्होंने इस पर कोई शर्म महसूस की. जब भी वक्त आया, उन्होंने समाज, भारत और राज्य व्यवस्था की कल्पना साफ़ तौर पर लोगों के सामने रखी.

लेकिन अब, जब इन सारी कल्पनाओं की कसौटी का वक्त चुनाव के समय सामने आया है, तब ऐसा लगता है कि संघ पहली बार अपनी विचारधारा के साथ समझौता कर रहा है. वह समझौता ही नहीं कर रहा है, बल्कि पूरी तौर पर उन राजनीतिक दलों से प्रतिस्पर्धा भी कर रहा है, जिनकी वो अब तक आलोचना करता रहा है. संघ अब तक ये खुलेआम कहता रहा कि राजनीति में वह भारतीय जनता पार्टी का सीमित समर्थन करता है. भारतीय जनता पार्टी की जीत और हार उसकी अपनी रणनीति का परिणाम होता है. इतिहास में कई बार ऐसा वक्त आया, जब ये लगा कि संघ ने अपनी विचारधारा आगे बढ़ाने के लिए कभी-कभी उनका भी समर्थन किया, जिनका वो सामान्य तौर पर समर्थन नहीं करता. एक बार तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का भी समर्थन संघ ने किया था और खुलेआम उनकी तारीफ़ भी की थी.

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के चुनाव में संघ ने खुलकर भारतीय जनता पार्टी का साथ दिया था. उनके स्वयंसेवक एक-एक पोलिंग बूथ पर चट्टान की तरह न केवल खड़े रहे, बल्कि नरेन्द्र मोदी के पक्ष में वोट डलवाने के लिए, जो भी कर सकते थे, उन्होंने किया. बिहार के चुनाव में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने स्वयं को नीतीश कुमार के सामने विकल्प के रूप में खड़ा कर दिया. उन्होंने यहां तक कहा कि अगर बिहार के लोग नीतीश कुमार को वोट देंगे, तो विकास समाप्त होगा, विध्वंस आएगा, लेकिन अगर नरेन्द्र मोदी को वोट देंगे तो विकास आएगा. बिहार के लोगों ने नीतीश कुमार को चुना, नरेन्द्र मोदी या भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में वोट नहीं दिया. संघ ने कहा कि चूंकि हमने भारतीय जनता पार्टी का समर्थन नहीं किया, इसलिए भारतीय जनता पार्टी हार गई. हालांकि ये घोषणा खुलेआम नहीं हुई, पर संघ के लोगों ने मज़बूती के साथ चारों तरफ़ ये हवा फैला दी. असम में भारतीय जनता पार्टी सीधे नहीं जीती. असम में अगर हेमन्त शर्मा कांग्रेस से टूटकर भारतीय जनता पार्टी में नहीं आए होते और प्रफुल्ल महंता को धोखे में रखकर उनका साथ भारतीय जनता पार्टी ने नहीं लिया होता, तो शायद वहां भी भारतीय जनता पार्टी सत्ता में नहीं आ पाती. वहां भारतीय जनता पार्टी की सरकार सिर्फ और सिर्फ़ कांग्रेस की महानतम मूर्खता का प्रतीक है.

अब उत्तर प्रदेश, पंजाब और गोवा के चुनाव हो रहे हैं. भारतीय जनता पार्टी टिकट बांट रही है और भारतीय जनता पार्टी के टिकट बंटवारे का परिणाम हर जगह दिख रहा है. भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ताओं में असंतोष है, पार्टी की ज़िला इकाइयों में विद्रोह की स्थिति है और राज्य स्तरीय नेतृत्व अपने को ठगा हुआ महसूस कर रहा है. दरअसल जिन्हें टिकट दिया जा रहा है, उनमें एक बड़ी संख्या उनकी है, जिनका रिश्ता कभी भारतीय जनता पार्टी से नहीं रहा. यह भारतीय जनता पार्टी के कार्यकर्ताओं के गले नहीं उतर रहा है कि जो बाहरी लोग माने जाते हैं, दूसरी पार्टियों से आए हुए माने जाते हैं, उन्हें टिकट देने में प्राथमिकता दी जाए. उत्तर प्रदेश और पंजाब में हर जगह केंद्रीय मंत्रियों के पुतले जलाए जा रहे हैं. अमित शाह और नरेन्द्र मोदी के खिलाफ़ नारे लगाए जा रहे हैं तथा भारतीय जनता पार्टी में असंतोष का ज्वालामुखी हर जगह फूट रहा है.

अब इसमें संघ कहां है? अब तक ये माना जाता रहा और इस बार भी साफ़ तौर पर देखा गया कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के ज़िला स्तरीय संगठन, ज़िले के विधानसभा क्षेत्र के हिसाब से उम्मीदवारों की जांच-परख करते हैं. उनके पक्ष या विपक्ष, गुण या दोष के आधार पर वे अपनी रिपोर्ट प्रदेशस्तरीय संगठन को देते हैं और वो प्रदेशस्तरीय संगठन भारतीय जनता पार्टी के साथ मिलकर उम्मीदवारों के चुनाव में महत्वपूर्ण रोल निभाता है. इस बार ऐसा क्या हुआ कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने या तो इस काम को किया नहीं या उसके अपने ज़िलास्तरीय पदाधिकारियों ने अपने को उसी सांचे में ढाल लिया, जिसमें कांग्रेस या समाजवादी पार्टी के लोग ढले हुए हैं.

> सत्ता आने के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पदाधिकारियों का एक बड़ा हिस्सा उसी धारा का पथिक हो गया है और उन्हीं बुराइयों के साये में पहुंच गया है, जिन्हें सत्ताधारी होने के नाते विभिन्न जाल जकड़ लेते हैं. वरिष्ठ संघ पदाधिकारी, जिनमें राज्यों के प्रमुख पदाधिकारी हैं, विदेश यात्राओं में मग्न हैं. वहीं, छोटे स्तर के पदाधिकारी उन सारी बुराइयों का रसास्वादन कर रहे हैं, जो सत्तारूढ़ दल के महत्वपूर्ण सदस्य होने के नाते विभिन्न व्यापारियों और पैसे वालों के नज़दीक आने से स्वत: पास आ जाते हैं.

अब तो कई लोग ये भी कहने लगे हैं कि सत्ता आने के बाद राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पदाधिकारियों का एक बड़ा हिस्सा उसी धारा का पथिक हो गया है और उन्हीं बुराइयों के साये में पहुंच गया है, जिन्हें सत्ताधारी होने के नाते विभिन्न जाल जकड़ लेते हैं. वरिष्ठ संघ पदाधिकारी, जिनमें राज्यों के प्रमुख पदाधिकारी हैं, विदेश यात्राओं में मग्न हैं. वहीं, छोटे स्तर के पदाधिकारी उन सारी बुराइयों का रसास्वादन कर रहे हैं, जो सत्तारूढ़ दल के महत्वपूर्ण सदस्य होने के नाते विभिन्न व्यापारियों और पैसे वालों के नज़दीक आने से स्वत: पास आ जाते हैं.

ये मानने को मन तो नहीं करता, लेकिन सच्चाई इसके आसपास ही कहीं दिखाई देती है क्योंकि 2017 के विधानसभा चुनाव में विशेषकर उत्तर प्रदेश में, जब ये घोषणा कर दी जाए कि अगर दूसरी पार्टियों से आया हुआ कोई विधायक है, तो उसका टिकट पक्का है. इसका मतलब भारतीय जनता पार्टी अपने स्वयंसेवकों या अपने कार्यकर्ताओं को टिकट नहीं देना चाहती है. उन्हें प्राथमिकता देना चाहती है, जो चुनाव जीत सकें. चाहे वो कभी भारतीय जनता पार्टी या संघ के संपर्क में नहीं रहे हों या फिर वे बाहुबली, भ्रष्टाचारी, अपराधी या दाग़ी ही क्यों न हों. उत्तर प्रदेश के टिकट बंटवारे में भारतीय जनता पार्टी की ये नई रणनीति उस पर कम, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर ज़्यादा सवाल खड़े करती है. अब मुझे नहीं मालूम कि संघ के राष्ट्रीय नेतृत्व का वर्चस्व, दबाव या उनका नैतिक शिक्षण का आधार कमज़ोर हो गया है या वो खुद चाहते हैं कि संघ उन्हीं तरीक़ों का इस्तेमाल करे और भारतीय जनता पार्टी को उन्हीं तरीकों का इस्तेमाल करने दे, जिनका इस्तेमाल दूसरे राजनीतिक दल करते हैं. अगर ऐसा है, तो ये निराशा के समुद्र में एक और नदी के मिलने का परिणाम माना जाएगा. संघ विचार की लड़ाई लड़े, इसका हमेशा स्वागत होना चाहिए, लेकिन संघ उन्हीं तरीक़ों का इस्तेमाल कर सिर्फ़ सत्ता पर कब्जा करने की योजना बनाए, जिनका इस्तेमाल बाक़ी राजनीतिक दल करते हैं, तो ये स्वागत योग्य हरगिज़ नहीं है. देखते हैं, संघ या भारतीय जनता पार्टी की चुनाव में उम्मीदवार उतारने की ये रणनीति कितनी सफल होती है और ये संघ या भारतीय जनता पार्टी को चुनाव में कितनी मदद करती है. गोवा में संघ में शायद इसीलिए एक बड़ी टूट हुई है, क्योंकि संघ से जो लोग अलग हुए, उन्हें संभालने की संघ के वरिष्ठ पदाधिकारियों ने कोई कोशिश नहीं की. ऐसा क्यों हुआ, इसका भी पता नहीं चला है, पर अगर संघ में हर प्रदेश में टूट होने की शुरुआत हो जाए, तो यह मानना चाहिए कि संघ की अपनी विचारधारा में भी अंतर्विरोध पैदा हो चुके हैं. भले ही उसका कारण विचार हो या वो साधन हों, जिनसे समझौता कर संघ अपनी एक नई तस्वीर बनाने की कोशिश कर रहा है. ■

editor@chauthiduniya.com

'हिंद स्वराज'

अशांति और असंतोष

> अशांति असल में असंतोष है. उसे आजकल हम 'अनरेस्ट' कहते हैं. कांग्रेस के ज़माने में वह 'डिस्कन्टेन्ट' कहलाता था. मि. ह्यूम हमेशा कहते थे कि हिन्दुस्तान में असंतोष फैलाने की ज़रूरत है. यह असंतोष बहुत उपयोगी चीज़ है. जब तक आदमी अपनी चालू हालत में खुश रहता है, तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है. इसलिए हर एक सुधार के पहले असंतोष होना ही चाहिए.

पाठक: तो आपने बंग-भंग को जागृति का कारण माना. उससे फैली हुई अशांति को ठीक समझा जाय या नहीं?

संपादक: इंसान नींद में से उठता है तो अंगड़ाई लेता है, इधर-उधर घूमता है और अशांत रहता है. उसे पूरा भान आने में कुछ वक्त लगता है. उसी तरह अगरचे बंग-भंग से जागृति आई है, फिर भी बेहोशी नहीं गई है. अभी हम अंगड़ाई लेने की हालत में हैं. अभी अशांति की हालत है. जैसे नींद और जाग के बीच की हालत जरूरी मानी जानी चाहिए और इसलिए वह ठीक कही जाएगी, वैसे बंगाल में और उस कारण से हिन्दुस्तान में जो अशांति फैली है, वह भी ठीक है. अशांति है यह हम जानते हैं, इसलिए शान्ति का समय आने की शक्यता है. नींद से उठने के बाद हमेशा अंगड़ाई लेने की हालत में हम नहीं रहते, लेकिन देर-सबेर अपनी शक्ति के मुताबिक पूरे जागते ही हैं. इसी तरह इस अशांति में से हम जरूर छूटेंगे. अशांति किसी को नहीं भाती.

पाठक: अशांति का दूसरा रूप क्या है?

संपादक: अशांति असल में असंतोष है. उसे आजकल हम 'अनरेस्ट' कहते हैं. कांग्रेस के ज़माने में वह 'डिस्कन्टेन्ट' कहलाता था. मि. ह्यूम हमेशा कहते थे कि हिन्दुस्तान में असंतोष फैलाने की ज़रूरत है. यह असंतोष बहुत उपयोगी चीज़ है. जब तक आदमी अपनी चालू हालत में खुश रहता है, तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है. इसलिए हर एक सुधार के पहले असंतोष होना ही चाहिए. चालू चीज़ से ऊब जाने पर ही उसे फेंक देने को मन करता है. ऐसा असंतोष हममें महान हिन्दुस्तानियों की और अंग्रेज़ों की पुस्तकें पढ़कर पैदा हुआ है. उस असंतोष से अशांति पैदा हुई और उस अशांति में कई लोग मरे, कई बरबाद हुए, कई जेल गए, कई को देश निकाला हुआ. आगे भी ऐसा होगा और होना चाहिए. ये सब लक्षण अच्छे माने जा सकते हैं. लेकिन इनका नतीजा बुरा भी आ सकता है.

पाठक: कांग्रेस ने हिन्दुस्तान को एक राष्ट्र बनाने के लिए क्या किया, बंग-भंग से जागृति कैसे हुई, अशांति और असंतोष कैसे फैले, यह सब जाना. अब मैं यह जानना चाहता हूं कि स्वराज्य के बारे में आपके क्या ख्याल हैं. मुझे डर है कि शायद हमारी समझ में फ़र्क़ हो.

संपादक: फ़र्क़ होना मुमकिन है. स्वराज्य के लिए आप-हम सब अधीर बन रहे हैं, लेकिन वह क्या है, इस बारे में हम ठीक राय पर नहीं पहुंचे हैं. अंग्रेज़ों को निकाल बाहर करना चाहिए, यह विचार बहुतों के मुंह से सुना जाता है. लेकिन उन्हें क्यों निकालना चाहिए, इसका कोई ठीक ख्याल किया गया हो, ऐसा नहीं लगता. आपसे ही एक सवाल मैं पूछता हूं. मान लीजिए कि हम मांगते हैं, उतना सब अंग्रेज़ हमें दे दें, तो फिर उन्हें (यहां से) निकाल देने की ज़रूरत आप समझते हैं?

पाठक: मैं तो उनसे एक ही चीज़ मांगूंगा. वह है: मेहरबानी करके आप हमारे देश से चले जाएं. यह मांग वे कबूल करें और हिन्दुस्तान से चले जाएं. तब भी अगर कोई ऐसा अर्थ का अनर्थ करें कि वे यहीं रहते हैं, तो मुझे उसकी परवाह नहीं होगी. तब फिर हम ऐसा मानेंगे कि हमारी भाषा में कुछ लोग 'जाना' का अर्थ 'रहना' करते हैं .

संपादक: अच्छा, हम मान लें कि हमारी मांग के मुताबिक अंग्रेज़ चले गये. उसके बाद आप क्या करेंगे?

पाठक: इस सवाल का जवाब अभी से दिया ही नहीं जा सकता. वे किस तरह जाते हैं, उस पर बाद की हालत का आधार रहेगा. मान लें कि आप कहते हैं उस तरह वे चले गये, तो मुझे लगता है कि उनका बनाया हुआ विधान हम चालू रखेंगे और राज का कारोबार चलाएंगे. कहने से ही वे चले जाएं तो हमारे पास लश्कर तैयार ही होगा, इसलिए हमें राजकाज चलाने में कोई मुश्किल नहीं आएगी.

संपादक: आप भले ही ऐसा मानें, लेकिन मैं नहीं मांनूंगा. फिर भी मैं इस बात पर ज्यादा बहस नहीं करना चाहता. मुझे तो आपके सवाल का जवाब देना है. वह जवाब मैं आपसे ही कुछ सवाल करके अच्छी तरह दे सकता हूं. इसलिए कुछ सवाल आपसे करता हूं. हम अंग्रेजों को क्यों निकालना चाहते हैं?

पाठक: इसलिए कि उनके राज-कारोबार से देश कंगाल होता जा रहा है. वे हर साल देश से धन ले जाते हैं. वे अपनी ही चमड़ी के लोगों को बड़े ओहदे देते हैं, हमें सिर्फ़ गुलामी में रखते हैं, हमारे साथ बेअदबी का बरताव करते हैं और हमारी जरा भी परवाह नहीं करते.

संपादक: अगर वे धन बाहर न ले जाएं, नम्र बन जाएं और हमें बड़े ओहदे दें, तो उनके रहने में आपको कुछ हर्ज है ?

पाठक: यह सवाल ही बेकार है. बाघ अपना रूप पलट दे तो उसकी भाईबन्दी से कोई नुक़सान है? ऐसा सवाल आपने पूछा, यह सिर्फ़ वक्त बरबाद करने के खातिर ही. अगर बाघ अपना स्वभाव बदल सके तो अंग्रेज़ लोग अपनी आदत छोड़ सकते हैं. जो कभी होने वाला नहीं है वह होगा, ऐसा मानना मनुष्य की रीत ही नहीं है.

संपादक: कैनेडा को जो राजसत्ता मिली है, बोअर लोगों को जो राजसत्ता मिली है, वैसी ही हमें मिले तो?

पाठक: यह भी बेकार सवाल है. हमारे पास उनकी तरह गोला-बारूद हो, तब वैसा ज़रूर हो सकता है. लेकिन उन लोगों के जितनी सत्ता जब अंग्रेज़ हमें देंगे तब हम अपना ही झंडा रखेंगे. जैसा जापान, वैसा हिन्दुस्तान. अपना जंगी बेड़ा, अपनी फौज और अपनी जाहोजलाली होगी और तभी हिन्दुस्तान का सारी दुनिया में बोलबाला होगा.

संपादक: यह तो आपने अच्छी तस्वीर खींची. इसका अर्थ यह हुआ कि हमें अंग्रेज़ी राज्य तो चाहिए, पर अंग्रेज़ (शासक) नहीं चाहिए. आप बाघ का स्वभाव तो चाहते हैं, लेकिन बाघ नहीं चाहते. मतलब यह हुआ कि आप हिन्दुस्तान को अंग्रेज़ बनाना चाहते हैं और हिन्दुस्तान जब अंग्रेज़ बन जाएगा, तब वह हिन्दुस्तान नहीं कहा जाएगा, लेकिन सच्चा इंग्लिस्तान कहा जाएगा. यह मेरी कल्पना का स्वराज्य नहीं है. ■

www.vastuvihar.org
वास्तु विहार®
एक विश्वस्तरीय टाउनशिप
AN ISO : 9001 : 2008 : 14001 : 18001 : 2007 COMPANY

बिहार, झारखंड, बंगाल, उड़ीसा एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश के 63 शहरों में 117 आवासीय परियोजनाओं की श्रृंखला
Call : 95340 95340

चौथी दुनिया के संपादक संतोष भारतीय की अपील पर बिहार से एक सुधी पाठक ने भेजी ग़ुमनाम शहीदों की कहानी

तिरहुत के इन ग़ुमनाम शहीदों की सुध कौन लेगा

अब तक हमारी तलाश में 48 लोगों का पता चला है, जिनको 15 अप्रैल 1858 तक तिरहुत में विभिन्न सज़ाएं दी गई है. ज़ाहिर है सरकारी सूची अभी इससे बहुत छोटी है, लेकिन उम्मीद है कि एक न एक दिन हमारी कोशिशें काम आएंगी और न केवल इन लोगों को बल्कि जिनके नाम पर्दे में हैं, उन्हें भी उनका सम्मानजनक मुक़ाम मिलेगा.

डॉ. कैसर शमीम

चौथी दुनिया के संपादक संतोष भारतीय ने जब अपने संपादकीय में लिखा, 'सरकारें शहीदों की तौहीन कर रही हैं' (16 से 22 जनवरी 2017) तो मुझे लगा कि मुझे भी इस विषय पर काम करना चाहिए. 1857 में तिरहुत से बग़ावत के आरोप में फांसी की सज़ा पाने वाले पहले शख़्स थे वारिस अली. वह तिरहुत में अंग्रेज़ों के खिलाफ़ विरोध का प्रतीक बनकर उभरे. इस लिहाज़ से वारिस अली की शहादत को याद करना उन तमाम लोगों को याद करना है, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम में और विशेष रूप से 1857 के संघर्ष में कुर्बानियां दीं, फांसी चढ़े, काला पानी भेजे गए और संपत्तियों से वंचित किये गये. अब तक की हमारी जानकारी के अनुसार ऐसे स्वतंत्रता सेनानियों की संख्या 48 है, जिन्होंने तिरहुत में 1857 और 1858 में कुर्बानियां दी थी.

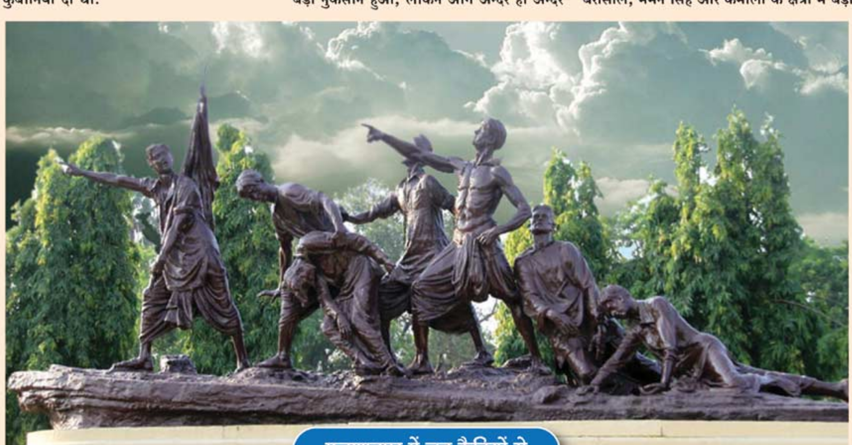

वारिस अली दिल्ली के रहने वाले थे. मुग़ल बादशाह से भी उनकी नज़दीकी थी. वे कंपनी की पुलिस में 10 वर्षों से मुलाज़िम थे और मुजफ्फ़रपुर शहर से 25 किलोमीटर दूर, बरूराज चौकी में जमादार के पद पर कार्यरत थे. उपलब्ध काग़ज़ों से यह भी ज्ञात होता है कि तरक्की पाकर वे जल्द ही किसी थाने में दरोगा बनने वाले थे. लेकिन 22 जून 1857 को उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और 6 जुलाई 1857 को विद्रोह के आरोप में फांसी दे दी गई. तिरहुत के मजिस्ट्रेट एच रिचर्डसन को वारिस अली पर बहुत दिनों से संदेह था कि वह अपराधियों और बाग़ियों से मिले हुये थे. नील की कोठी वाले अंग्रेज़ भी वारिस अली से नाराज़ थे और बहुत दिनों से उनकी मुखबिरी की जा रही थी. वारिस अली पर यह आरोप था कि 1857 में मुजफ्फरपुर जेल तोड़ने की घटना और कैदियों की बगावत में उनका हाथ था. उन्होंने पुलिस की नौकरी में रहकर निलहों की मर्जी का काम नहीं किया और उनकी नाराज़गी मोल ली.

1855 में एक तरफ जहां संथालों ने शोषण और अत्याचार के ख़िलाफ़ विद्रोह का झंडा बुलंद किया था, वहीं शाहाबाद और मुज़फ्फरपुर की जेलों में 14 मई को क़ैदी लड़ने के लिए उठ खड़े हुए. मुजफ्फरपुर में जब कैदियों से धातु का लोटा और बर्तन छीनकर उन्हें मिट्टी का बर्तन पकड़ाया गया तो वे नाराज़ हो गये. मिट्टी का बर्तन एक बार शौच के लिए इस्तेमाल हो जाए तो अपवित्र माना जाता है. अंग्रेज़ ये बात समझने को तैयार नहीं थे. उनको डर था कि धातु के लोटे और बर्तन को गलाकर हथियार और जेल तोड़ने का सामान बनाया जा सकता है.

मजिस्ट्रेट ने डरकर गोली चलवाई तो बात और बढ़ गई. जेल के कैद़ी अधिकतर गांव के किसान थे. जेल के पास अफीम वालों का एक गोदाम था, जहां 12 हज़ार किसान अपने-अपने काम से आए हुए थे. जेल में हो रही कार्यवाही की ख़बर फैली, तो वे तमाम किसान जेल की ओर दौड़े. उनके आने से कैदियों का हौसला भी बढ़ गया. हालांकि इस पूरे दंगे में कैदी और किसानों का बड़ा नुकसान हुआ, लेकिन आग अन्दर ही अन्दर सुलगती रही.

मुजफ्फरपुर में जब कैदियों से धातु का लोटा और बर्तन छीनकर उन्हें मिट्टी का बर्तन पकड़ाया गया तो वे नाराज़ हो गये. मिट्टी का बर्तन एक बार शौच के लिए इस्तेमाल हो जाए तो अपवित्र माना जाता है. अंग्रेज़ ये बात समझने को तैयार नहीं थे. उनको डर था कि धातु के लोटे और बर्तन को गलाकर हथियार और जेल तोड़ने का सामान बनाया जा सकता है.

तीतू मीर 24 परगना का एक नेता था, जो जवानी की दहलीज़ पर क़दम रखते ही वहाबियों के पदचिन्हों पर चलने लगा था. उसने 24 परगना के क्षेत्र में किसानों और दस्तकारों पर होने वाले अत्याचारों के विरूद्ध संघर्ष किया. 1831 में जब उसने बग़ावत का झंडा बुलंद किया, तो उसके पैरोकारों की संख्या 15 हज़ार तक पहुंच गई. इन लोगों ने 24 परगना में बांस का एक क़िला बनाया और 24 परगना, नादिया, फरीदपुर आदि पर आधारित अपनी स्वतंत्र सरकार की घोषणा की. लेकिन वह 24 जनवरी 1831 को अंग्रेज़ी सेना के हमले को सहन नहीं कर सका. तीतू मीर और उसके साथियों को निर्दयता से क़त्ल किया गया और जो बच गए, उनमें से उसके भतीजे को तथाकथित अदालती कार्रवाई के द्वारा फांसी की सज़ा दी गई, वहीं उसके 350 साथियों को काला पानी भेज दिया गया. तीतू मीर के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर बंगाली भाषा की प्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी ने उन पर एक उपन्यास लिखा और उन पर कई ड्रामे भी होते रहे हैं. इसी प्रकार फरायज़ी आन्दोलन को हाजी शरियतुल्लाह ने 1837 में शुरू किया था, जिसका मक़सद किसानों को ज़मींदारों और यूरोपीयों के जुल्म से निजात दिलाना था. इस आन्दोलन का ढाका, फरीदपुर, बरीसाल, मेमन सिंह और कमीला के क्षेत्रों में बड़ा ज़ोर था. जमींदारों ने अंग्रेज़ों से मिलकर इस आन्दोलन को कुचलने की बहुत कोशिश की. इसी सिलसिले में उन्होंने 1837 में यह बात भी फैलाई कि शरियतुल्लाह अपनी हुकूमत क़ायम करना चाहता है. उन्होंने इस आन्दोलन को लेकर लोगों को झूठे मुक़दमों में फंसाना शुरू किया. खुद शरियतुल्लाह को किसानों को भड़काने के आरोप में कई बार गिरफ्तार किया गया. शरियतुल्लाह की मौत के बाद उनके बेटे मोहसिनुद्दीन अहमद (दादू मियां) ने कमान संभाली. किसानों के अधिकारों की लड़ाई के कारण वह इतने लोकप्रिय हो गये थे कि अदालत में उनके खिलाफ़ अंग्रेज़ों को कोई गवाह भी नहीं मिल पाता था.

पागलपंथी आन्दोलन (1730-40) हो या तीतू मीर का आन्दोलन, या फिर फरायज़ी आन्दोलन (1837-67), ये सब मूल रूप से दस्तकारों, छोटे किसानों और खेत मज़दूरों पर होने वाले जुल्म के खिलाफ़ चलाये गये थे. वहाबियों ने इसका फायदा उठाकर किसानों और खेत मज़दूरों के बीच अपनी बुनियाद मज़बूत कर ली थी. इसी सिलसिले में ज़मींदारों और यूरोपियों से उनका बार-बार टकराव हुआ. 1831 में, बंगाल में विरोध के एक नेता तीतू मीर और उनके साथियों को निर्दयता से मार दिया गया था, लेकिन आग बुझी नहीं थी और उसकी आंच बिहार में भी पहुंच रही थी, जो बंगाल प्रेसीडेंसी का हिस्सा था. अली करीम हों या वारिस अली सब कहीं न कहीं इससे जुड़े हुए नज़र आते हैं. इसलिए वारिस अली को याद करना इस पूरे इतिहास को याद करना है.

वारिस अली की गिरफ्तारी के बाद जुल्म-ओ-सितम का एक लंबा सिलसिला चल पड़ा. अब तक हमारी तलाश में 48 लोगों का पता चला है, जिनको 15 अप्रैल 1858 तक तिरहुत में विभिन्न सज़ाएं दी गई है. ज़ाहिर है सरकारी सूची अभी इससे बहुत छोटी है, लेकिन उम्मीद है कि एक न एक दिन हमारी कोशिशें काम आएंगी और न केवल इन लोगों को बल्कि जिनके नाम पर्दे में हैं, उनको भी उनका सम्मानजनक मुक़ाम मिलेगा. ■

feedback@chauthiduniya.com

तिरहुत में अग्रेजों द्वारा दंडित हुए 48 स्वतंत्रता सेनानी

	सज़ा पाने वालों के नाम	आरोपों का विवरण	सज़ा सुनाए जाने की तारीख़	सज़ा
1	मीर वारिस अली, पुलिस जमादार, बरूराज चौकी, तिरहुत क्षेत्र	विद्रोही पत्र लिखना, फरार होने की कोशिश	6 जुलाई 1857	फांसी
2	छोटू उर्फ झगरू, मौजा मधुरापुर, परगना लरोहा, तिरहुत क्षेत्र(9वां रेजीमेंट)	विद्रोह	8 जुलाई 1857	"
3	बेलनाम मिस्र, मोहल्ला खुरदा, परगना गोराह, जिला लखनऊ (9वां रेजीमेंट)	"	"	कालापानी
4	शिवनारायण मिस्र, मोहल्ला बलरामपुर, परगना ख़ास, लखनऊ (23वां रेजीमेंट)	"	"	"
5	लक्ष्मण प्रसाद, मोहल्ला विसोड, परगना वलरा, जिला गाजीपुर	"	9 जुलाई 1857	फांसी
6	दीनू सिंह, मोहल्ला माधोपुर, परगना मोहम्मदाबाद, जिला फर्रूखाबाद	"	"	"
7	मोन सिंह, मोहल्ला रस्तूरन, परगना देवरिया घुलार, जिला लखनऊ	"	"	"
8	रामधन, भावलपुर, जिला इलाहाबाद	"	14 जुलाई 1857	"
9	गन्नू सिंह, मोहल्ला बोरनी, परगना बेलूनजा, ज़िला छपरा	"	"	"
10	इसरी सिंह, दाऊद पट्टी, परगना व जिला छपरा	"	30 जुलाई 1857	"
11	शंकरलाल, शहर पुलिस स्वार, मुजफ्फरपुर	"	24 अगस्त 1857	कालापानी, संपत्ति की जब्ती
12	कल्लन ख़ां, शहर पुलिस स्वार, मुजफ्फरपुर	"	"	"
13	वज़ीर अली, शहर पुलिस स्वार, मुजफ्फरपुर	"	"	"
14	गुरदयाल सिंह, बर्कअंदाज़	"	"	"
15	रामदीद साही, निवासी बड़ा गांव, परगना बैहूरा, ज़िला तिरहुत	विद्रोही भाषा का प्रयोग, लूट संपत्ति की जब्ती	18 सितंबर 1857	कालापानी
16	कुदाई साही, परगना बेहूरा, ज़िला तिरहुत	"	"	"
17	छिट्टू साही, "	"	"	"
18	किशना साही, "	"	"	"
19	तिलक तिवारी, "	"	"	7 वर्ष सश्रम कारावास
20	शिवटहल डरोमी, "	"	"	"
21	नत्थूल साही, "	"	"	14 वर्ष सश्रम कारावास
22	छोटू साही, "	"	"	"
23	हंसराज साही, "	"	"	"
24	सोबा साही, "	"	"	"
25	बैजनाथ तिवारी, "	"	"	"
26	तिलक साही, "	"	"	"
27	पंदीव साही, "	"	"	"
28	चतुरधारी साही, "	"	19 दिसंबर 1857	"
29	दर्शन साही, "	"	"	कालापानी, संपत्ति की जब्ती
30	रोशन साही, "	"	4 मार्च 1858	
31	शेख़ कुरबान अली, निवास, अज्ञात	विद्रोही भाषा का प्रयोग	17 अगस्त 1857	3 वर्ष कैद
32	रामटहल, निवासी शर्फ नगर, परगना तुरयानी, जिला तिरहुत	विद्रोही भाषा का प्रयोग, डकैती, हिंसा	"	5 वर्ष कैद, संपत्ति की जब्ती
33	भागीरथ, निवासी धर्मपुर, परगना तुरयानी, जिला तिरहुत	"	"	"
34	रामथोनी, "	"	"	"
35	दीनगोपाल, निवासी पोदटासिरका, परगना तुरयानी, ज़िला तिरहुत	"	"	"
36	तूफ़ानी, "	"	"	"
37	रंजीत, "	"	"	"
38	भगीरथ, "	"	"	"
39	संतोखी, "	"	"	"
40	घासी ख़ां, पुत्र शम्शू ख़ां, पूर्व स्वार शहर पुलिस	विद्रोह	24 अगस्त 1857	कालापानी, संपत्ति की जब्ती
41	ख़ैराती ख़ां, निवासी मोहल्ला सोलनगंज, जिला छपरा	"	"	"
42	केलभ सिंह, दफादार, बिहार स्टेशन	अज्ञात	अज्ञात	संपत्ति के कुछ हिस्से की जब्ती
43	शिवचरन सिंह, नजीब, "	"	"	"
44	मीर हैदर अली नजीब, "	"	"	"
45	दर्शन सिंह, "	"	"	"
46	भकारी, "	"	"	"
47	नूमकुमार सिंह, "	"	"	कालापानी, सश्रम कारावास
48	झूमलाल सिंह, मोहल्ला अंधरा, परगना अनरवा (नजीब, बिहार स्टेशन नम्बर- 4)	विद्रोह	15 मार्च 1858	कालापानी

देवरिया के रामपुर कारख़ाना में गरमा रहा किसानों के उत्पीड़न का मुद्दा

चीनी मिलों और सत्ता की साठगांठ का बदला लेंगे

क्षेत्र में गजाला लारी को बिना काम वाला जन प्रतिनिधि माना जाता है. उनके खिलाफ लोगों में काफी रोष है. इस बार रामपुर कारखाना विधानसभा सीट से जुझारू किसान नेता शिवाजी राय की उम्मीदवारी खासी चर्चा में है. शिवाजी राय पिछले चार बार से विधानसभा का चुनाव लड़ रहे हैं. इस बार जनता दल (यू) ने शिवाजी राय को रामपुर कारखाना से अपना आधिकारिक उम्मीदवार घोषित किया है. स्थानीय लोग शिवाजी राय के पक्ष में हैं.

कुमार अजय/सूफ़ी यायावर

बिहार की सीमा से सटा पूर्वी उत्तरप्रदेश का पिछड़ा जिला देवरिया कभी चीनी की कटोरी (शुगर बाउल) के नाम से प्रसिद्ध था. चौदह चीनी मिलें इसकी समृद्धि की प्रतीक थीं. वक्त बदला, तो सियासत की प्राथमिकताएं भी बदलीं और राजनीति की दुरभिसंधियों ने चीनी मिलों को धीरे-धीरे बंद कराना शुरू कर दिया. किसान बेबस और लाचार बनते चले गए. विकास से बदहाली के सफ़र की पटकथा लिखी जाने लगी. पार्टियों का वार-रूम जातीय गुणा-गणित पर फोकस होने लगा. बाहुबल, जातिबल और धनबल की सियासत ने चुनावों को मुद्दा विहीन कर दिया. मिल-कारखाने बंद होते गए और किसानों की खुशहाली छिन गई. विडंबना यह है कि इसके बावजूद चीनी मिलों का बंद होना, यहां चुनावों में कभी मुद्दा नहीं बना, जबकि देवरिया समाजवादी आन्दोलन का प्रमुख केंद्र रहा. गन्ना मिलों और गन्ना समितियों ने कई विधायक पैदा किए. लेकिन कालांतर में इन नेताओं ने भी आन्दोलन से अपना किनारा कर लिया. आज यहां के हालात इतने बदतर हो गए हैं कि किसान मजदूर बन गए हैं और युवा दूसरे प्रदेशों में पलायन करने को बेबस हैं.

देवरिया की रामपुर कारखाना विधानसभा सीट से समाजवादी पार्टी की गजाला लारी विधायक हैं. गजाला लारी शिवपाल यादव की नजदीकी मानी जाती हैं, इसलिए अखिलेश निजाम में उनके टिकट मिलने पर ग्रहण लग सकता है. क्षेत्र में गजाला लारी को बिना काम वाला जन प्रतिनिधि माना जाता है. उनके खिलाफ लोगों में काफी रोष है. इस बार रामपुर कारखाना विधानसभा सीट से जुझारू किसान नेता शिवाजी राय की उम्मीदवारी खासी चर्चा में है. शिवाजी राय पिछले चार बार से विधानसभा का चुनाव लड़ रहे हैं. इस बार जनता दल (यू) ने शिवाजी राय को रामपुर कारखाना से अपना आधिकारिक उम्मीदवार घोषित किया है. स्थानीय लोग शिवाजी राय के पक्ष में हैं. इस बार उन्हें चार बार विधानसभा चुनाव लड़ने पर लोगों की सहानुभूति भी मिल रही है. वैसे किसानों के लिए संघर्षरत रहने और दर्जनों बार पुलिस की लाठियां खाने व गिरफ्तार होने और देशभर में पूर्वांचल के किसानों का मसला उठाते रहने के कारण शिवाजी राय नाम के लिए मोहताज नहीं हैं. गन्ना किसानों के लिए प्रदेश की राजधानी लखनऊ से लेकर देश की राजधानी दिल्ली तक धरना-प्रदर्शनों, आंदोलनों, सभाओं और टीवी चैनेलों पर होने वाली चर्चाओं में

शिवाजी राय की सक्रिय भागीदारी सर्वविदित है. देवरिया ओवर ब्रिज निर्माण के लिए 100 दिन का अनशन रहा हो या गोरया घाट पुल निर्माण के लिए लखनऊ में क्रमिक अनशन और खुखुन्दू विकास खंड के लिए अथक संघर्ष का मसला हो, शिवाजी राय का नाम सुर्खियों में रहा है. राय के पक्ष में लोगों के बीच एक सहानुभूति की लहर भी दिख रही है. स्थानीय लोगों में यह भी चर्चा है कि समाजवादी पार्टी के साथ महागठबंधन में शामिल होने पर जदयू अगर रामपुर कारखाना सीट समझौते में छोड़ भी देगी, तब भी शिवाजी राय को मिल रहे जन समर्थन पर कोई असर नहीं पड़ेगा. वैसे भी मौजूदा विधायक को लेकर स्थानीय लोगों में काफी नाराजगी है.

देवरिया सात विधानसभा क्षेत्रों का जनपद है. जिसमें रामपुर कारखाना, देवरिया सदर, बरहज, सलेमपुर, भाटपाररानी, रूद्रपुर और पथरदेवा विधानसभा सीटें आती हैं. यहां के सात सीटों में से पांच पर समाजवादी पार्टी के विधायक हैं, तो एक सीट पर भाजपा और एक पर कांग्रेस काबिज है. 2012 के चुनाव में बहुजन समाज पार्टी (बसपा) का जिले में खाता भी नहीं खुला था. बसपा ने देवरिया सदर से अभय नाथ तिवारी, सलेमपुर से शंकर मिस्त्री, रूद्रपुर से चंद्रिका निषाद, पथरदेवा से नीरज वर्मा, रामपुर कारखाना से गिरजेश शाही, बरहज से मुरली जायसवाल और भाटपार रानी से सभा कुंवर को मैदान में उतारा है. जबकि अभी तक भाजपा के प्रत्याशी तय नहीं हो पाए थे. देवरिया जिले में भाजपा के एकमात्र विधायक देवरिया सदर से जनमेजय सिंह हैं. जनमेजय सिंह कुर्मी जाति से आते हैं. यहां इनका जातीय आधार मजबूत है. इसके पूर्व 1991 में भाजपा से रवीन्द्र प्रताप मल्ल विधायक निर्वाचित हुए थे. सन 1967 व 1985 में इस विधानसभा सीट से एफ. चिश्ती व फजले मसूद कांग्रेस पार्टी से चुनाव जीते थे. अन्य चुनावों में यहां समाजवादियों को जीत मिली थी. 2017 के चुनाव में समाजवादी पार्टी ने पूर्व एमएलसी रामनगीना यादव के पुत्र विजय प्रताप यादव को उम्मीदवार बनाया है. वहीं बसपा ने अभयनाथ त्रिपाठी को मैदान में उतार कर दलित-ब्राह्मण वोट साथ रखने की जुगत लगाई है. जनमेजय सिंह पर भाजपा फिर से दांव लगाने जा रही है. निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में अभी कोई कददावर चेहरा मैदान में नही है. कुल मिलकर यहां त्रिकोणीय मुकाबले की संभावना है.

बरहज विधानसभा का पुराना औद्योगिक इतिहास रहा है. यहां का लौह उद्योग, काष्ठ उद्योग अब आखिरी सांसें ले रहा है. बाढ़ यहां की मूल समस्या है. अभी यह सीट समाजवादी पार्टी के खाते में है. यहां से विधायक प्रेमप्रकाश सिंह हैं. सपा ने उन्हें उम्मीदवार नहीं बनाया है. उनकी जगह गेनालाल यादव साइकिल की सवारी करते नजर आ रहे हैं. बसपा ने एनआरएचएम घोटाले के आरोपी रामप्रसाद जायसवाल के पुत्र मुरली मनोहर को हाथी का महावत बनाया है. बरहज सीट से पहली बार 1967 में सोशलिस्ट पार्टी के दिग्गज नेता बाबू उग्रसेन सिंह विधायक बने थे. बाद में 1969 में कांग्रेस के राजा अवधेश प्रताप मल्ल ने जीत दर्ज की. 1974 में कांग्रेस के ही सुरेन्द्र मिश्र विधायक बने. 1977 व 1980 में बाबू मोहन सिंह ने कांग्रेस से सीट छीनकर पुनः सोशलिस्ट खाते में डाल दी. 1985 में कांग्रेस के सुरेन्द्र मिश्र ने इस सीट पर फिर से कब्ज़ा जमा लिया. 1989 में निर्दलीय स्वामीनाथ यादव ने और वर्ष 1985 में भाजपा के दुर्गा मिश्र ने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया. उसके बाद से यह सीट लगातार सपा व बसपा के खाते में जाती रही है.

भाटपाररानी विधानसभा क्षेत्र बिहार से सटा हुआ इलाका है. जातीय लामबंदी के कारण यहां विकास का मुद्दा गौण है. आप इसका अंदाजा इस बात से लगा सकते हैं कि यह सीट 40 वर्ष तक दो राजनीतिक व्यक्तियों के कब्जे में रही. वर्ष 1969, 1988, 1989 और 1991 में सोशलिस्ट नेता हरिवंश सहाय यहां से विधायक रहे. जबकि वर्ष 1985, 1993, 2002, 2007 और 2012 में कामेश्वर उपाध्याय ने यहां से लगातार अपनी जीत दर्ज की. 2013 में उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र आशुतोष उपाध्याय ने यह सीट सपा की झोली में डाल दी. वर्तमान में आशुतोष उपाध्याय सपा उम्मीदवार के रूप में मैदान में हैं, जबकि बसपा ने कुशवाहा बिरादरी के नेता हरिवंश सहाय के शिष्य सभाकुंवर पर दांव लगाया है. भाजपा ने अब तक इस विधान सभा से खाता नहीं खोला है.

रूद्रपुर विधानसभा क्षेत्र सरयू और राप्ती का दियारा क्षेत्र है. विकास के लिहाज से आजादी के बाद भी यह इलाका रेल सम्पर्क मार्ग से नहीं जुड़ पाया है. वर्तमान में इस सीट पर कांग्रेस के अखिलेश प्रताप सिंह का कब्ज़ा है. 1962 से 1985 तक इस सीट पर कांग्रेस का कब्ज़ा रहा. 1989 व वर्ष 1993 में क्रमशः लोकदल व सपा उम्मीदवार के रूप में मुक्तिनाथ यादव ने इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया. वर्ष 1991 व 1996 में भाजपा के जयप्रकाश निषाद इस सीट से विधायक रहे. वर्ष 2002 में सपा के अनुग्रह नारायण व 2007 में बसपा के सुरेश तिवारी ने जीत दर्ज की. 27 वर्ष बाद अखिलेश सिंह ने कांग्रेस की सीट वापस पाई. कांग्रेस ने अखिलेश पर फिर से दांव लगाया है. बसपा ने युवा नेता चन्द्रिका निषाद को अपना प्रत्याशी बनाया है. साफ छवि के कारण अखिलेश की दावेदारी इस सीट पर मजबूत है. पथरदेवा विधानसभा सीट सन 2007 के नए परिसीमन के बाद अस्तित्व में आई. पहले यह पडरौना जनपद के कसया व कुछ देवरिया जनपद में आता था. बाद में गौरीबाजार विधानसभा का अस्तित्व समाप्त कर पथरदेवा विधानसभा का गठन किया गया. वर्तमान में यह सीट सपा के खाते में है. यहां शकीर अली ने भाजपा के दिग्गज नेता व पूर्व प्रदेश अध्यक्ष सूर्य प्रताप शाही को मात देकर सीट पर कब्ज़ा किया था. मुस्लिम बहुल यह सीट इन्हीं दिग्गजों के बीच मुकाबले में रहेगी. सलेमपुर विधानसभा ब्राह्मण बहुल सीट होने के बावजूद यहां सिर्फ एक ब्राह्मण निर्णायक भूमिका में रहे. यहां 1980 में दुर्गा प्रसाद मिश्र भाजपा से निर्वाचित हुए थे. वर्ष 1967 व 1969 में कांग्रेस से राजा अवधेश प्रताप मल्ल व शिवबचन ने जीत दर्ज की. पुनः वर्ष 1985 में राजा अवधेश प्रताप कांग्रेस से विजयी हुए. अन्य समय यह सीट सपा और बसपा खेमे में रही. वर्तमान विधायक मनबोध समाजवादी पार्टी से हैं. यह सीट 2007 में अनुसूचित कोटे के अंतर्गत आरक्षित है. कुल मिलाकर देखा जाए तो इस बार यहां के चुनाव में प्रत्याशियों की साफ छवि, उनके जन सरोकार और उनकी सामाजिक सक्रियता पर लोग ध्यान दे रहे हैं. जातिवाद का फैक्टर तो है, लेकिन इस पर लोगों का इस बार थोड़ा कम ध्यान दिख रहा है.■

चुनाव में सत्ताधारी पार्टी को खुश करती हैं चीनी मिलें

देवरिया के रामपुर कारखाना विधानसभा क्षेत्र में किसानों की बदहाली और खास तौर पर गन्ना किसानों के साथ विभिन्न सरकारों द्वारा किए गए आपराधिक सलूक का मुद्दा गरम है. यहां की चीनी मिलों पर किसानों के करोड़ों रुपए बाकी हैं, लेकिन सरकार बकाये का भुगतान कैसे हो इस पर कोई चिंता नहीं करती, उल्टे चीनी मिलों के पूंजीपति मालिकों को खुश करने का जतन करती रहती है. वही पूंजीपति सत्ताधारी राजनीतिक दलों का चुनाव में खास ध्यान रखते हैं. गन्ना किसानों के मसले पर जूझते रहने वाले किसान नेता व रामपुर कारखाना से जदयू प्रत्याशी शिवाजी राय कहते हैं कि सरकार की शह पर चीनी मिल मालिकों ने अपना सिंडिकेट (गिरोह) बना लिया है. उत्तर प्रदेश में गन्ना किसान पहले बहुत खुशहाल थे. गन्ने की फसल और चीनी मिलों से प्रदेश के गन्ना बेल्ट में कई अन्य उद्योग धंधे भी फल-फूल रहे थे. चीनी मिलों और किसानों के बीच गन्ना विकास समितियां (केन यूनियन) किसानों के भुगतान से लेकर खाद, ऋण, सिंचाई के साधनों, कीटनाशकों के साथ-साथ सड़क, पुल, पुलिया, स्कूल और औषधालय तक की व्यवस्था करती थीं. गन्ने की राजनीति कर नेता तो कई बन गए, लेकिन उन्हीं नेताओं ने चीनी मिलों की दलाली करके गन्ना किसानों को बर्बाद कर दिया. गन्ना क्षेत्र से लोगों का भयंकर पलायन हुआ. यह अभी भी जारी है. उन्हें महाराष्ट, पंजाब, दिल्ली, बंगाल या अन्य राज्यों में दिहाड़ी कर पेट पालना पड़ रहा है. साजिशों के तहत उत्तरप्रदेश की तकरीबन सारी सरकारी चीनी मिलें कौड़ियों में बेच डाली गईं. इसमें सारी सरकारें शामिल रही हैं. भाजपा की सरकार ने हरिशंकर तिवारी की कम्पनी गंगोत्री इंटरप्राइजेज को चार मिलें बेची थीं. गंगोत्री इंटरप्राइजेज ने इन्हें चलाने के बजाए मशीनों को कबाड़ में बेच कर ढांचा सरकार के सुपुर्द कर दिया. फिर समाजवादी पार्टी की सरकार ने प्रदेश की 23 चीनी मिलें अनिल अम्बानी को बेचने का प्रस्ताव रखा. सपा सरकार ने उन चीनी मिलों को 25-25 करोड़ रुपए देकर चलवाया भी, लेकिन मात्र 15 दिन चल कर वे फिर से बंद हो गईं. फिर बसपा की सरकार आ गई. मुख्यमंत्री मायावती ने सपा कार्यकाल के उसी प्रस्ताव को उठाया और चीनी मिलों को औने-पौने दाम में बेचना शुरू कर दिया. मायावती ने पौंटी चड्ढा की कम्पनी और आईबीएन कम्पनी के हाथों 14 चीनी मिलें बेच डालीं. देवरिया की भटनी चीनी मिल महज पौने पांच करोड़ में बेच दी गई. जबकि वह 107 करोड़ की थी. कैग ने इसका पर्दाफाश भी किया. इसके अलावा देवरिया चीनी मिल 13 करोड़ में और बैतालपुर चीनी मिल 11 करोड़ में बेच डाली गई. अब उन्हीं मिलों की जमीनों को प्लॉटिंग कर महंगी कॉलोनी के रूप में विकसित किया जा रहा है. राय कहते हैं कि चीनी मिलों को चलाने के लिए किसानों ने अपनी जमीनें दी थीं, लेकिन उसके बिकने पर उसकी अधन्नी भी सम्बद्ध किसानों को नहीं मिली. किसानों के खाते में गन्ने का पैसा डालने की व्यवस्था लागू करके तत्कालीन मुख्यमंत्री कल्याण सिंह ने केन यूनियनों को पंगु करने की राजनीति की थी. बाद की सपा और बसपा की सरकारों ने उद्योगपतियों को फायदा पहुंचाने के लिए किसानों का बंटाधार करके रख दिया.

शिवाजी राय

शिवाजी राय कहते हैं कि भारत विश्व का पहला देश है, जहां किसानों के बजाय पूंजीपतियों को सब्सिडी दी जाती है. यह किसानों के खिलाफ सरकार और पूंजीपतियों की साठगांठ है. चीनी मिलों की हालत इतनी खस्ता है तो केंद्र सरकार को सारी चीनी मिलों का अधिग्रहण कर लेना चाहिए. इससे सरकार का बजटीय बोझ भी कम होगा और किसानों को राहत भी मिल जाएगी. चीनी मिल मालिकों पर यह भी आरोप है कि किसानों के बकाये के हजारों करोड़ रुपये दूसरे धंधों में निवेश कर दिए गए हैं और उससे भारी मुनाफा कमाया जा रहा है. उद्योगपति धंधा कर रहा है और किसान भुखमरी का शिकार हो रहा है. इसका नतीजा यह निकला है कि उत्तरप्रदेश में गन्ना बुआई के क्षेत्रफल में तेजी से गिरावट आई है. किसान अब गन्ना बोने से परहेज कर रहे हैं. देवरिया समेत पूरे पूर्वांचल में हालात सबसे खराब है.

बेटे के लिए नेताजी ने त्याग दी सारी प्राथमिकताएं, खुल रहा नियोजित-नौटंकी का भेद

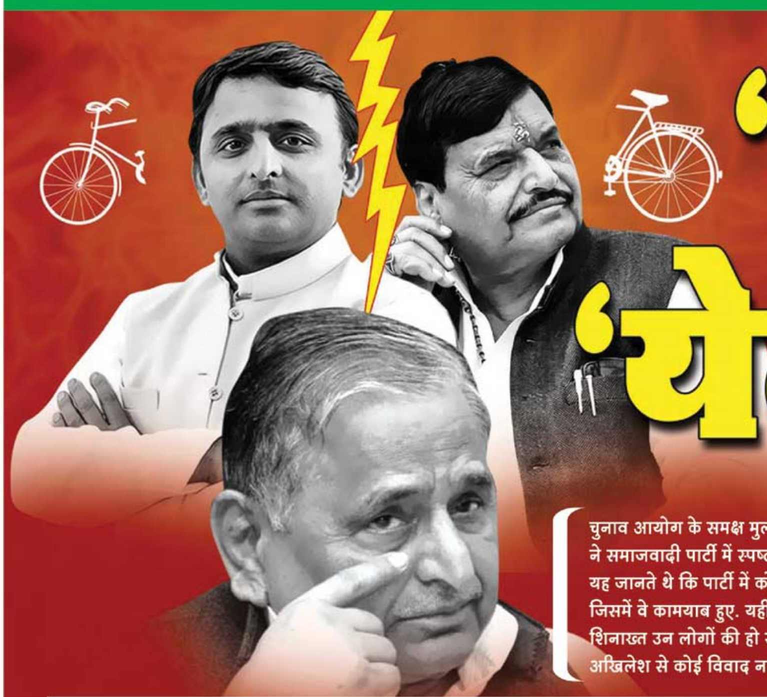

'मेलो' नहीं 'येलो-ड्रामा'

चुनाव आयोग के समक्ष मुलायम एक बार भी यह मानने को तैयार नहीं हुए कि पार्टी में कोई 'स्प्लिट' (विभाजन) है. जबकि चुनाव आयोग ने समाजवादी पार्टी में स्पष्ट विभाजन (स्प्लिट) मानते हुए ही इस मामले पर सुनवाई की और अपना फैसला सुनाया. साफ है कि मुलायम यह जानते थे कि पार्टी में कोई 'स्प्लिट' नहीं है, वे पार्टी से केवल अखिलेश के भविष्य की आशंकित अड़चनों को 'स्प्लिट' करना चाहते थे, जिसमें वे कामयाब हुए. यही वजह है कि पार्टी में चर्चा इस बात की नहीं है कि अखिलेश के समर्थन में कितने लोगों ने हस्ताक्षर किए, बल्कि शिनाख्त उन लोगों की हो रही है जिन लोगों ने अखिलेश के समर्थन में हस्ताक्षर नहीं किए. जिस तरह मुलायम शुरू से ही कहते रहे कि अखिलेश से कोई विवाद नहीं, उसी तरह अखिलेश भी लगातार यह कहते रहे हैं कि उनका पिता मुलायम सिंह से कोई विवाद नहीं है.

प्रभात रंजन दीन

समाजवादी पार्टी के झंडाबरदार परिवार में चला मुगलकालीन सत्ताकांक्षी विद्रोह सियासतदानों की नजर में भले ही 'मेलो-ड्रामा' साबित हुआ हो, लेकिन प्रदेश के आम लोग इसे 'येलो-ड्रामा' मानते हैं. इस पीत-नाट्य का पटाक्षेप अखिलेश के पक्ष में करा कर मुलायम सिंह यादव खुद को बड़े व्यूह रचनाकार, बड़े दांवबाज या बड़े बिसातबाज मान रहे होंगे, लेकिन जमीनी असलियत यही है कि पुत्रमोह में एक कद्दावर राजनीतिज्ञ ने जन-पक्षीय राजनीति की पूरी दुनिया के सामने भद्द करा दी. अखिलेश यादव के पक्ष में दिया गया चुनाव आयोग का 42 पेजी फैसला सूक्ष्मता से पढ़ लें, तो आपको मुलायम के पीत-नाट्य की असलियत का पता चल जाएगा. इस 'येलो ड्रामा' के नेपथ्य में पिता-पुत्र दोनों एक नजर आएंगे और भाई शिवपाल यादव अलग-थलग.

जिस तरह पूरी पार्टी ने अखिलेश के प्रति समर्थन जताया और समर्थन के दस्तावेज चुनाव आयोग तक पहुंचे, उसे देख कर ही चुनाव आयोग में कार्यरत कुछ अधिकारियों ने कह दिया था कि यह मुलायम की अंदरूनी सहमति के बगैर हो ही नहीं सकता. मुलायम के प्रति प्रतिबद्ध नेताओं की पूरी जमात ने अखिलेश के समर्थन में बाकायदा हस्ताक्षर किए, इनमें कई ऐसे नाम हैं जिनका मुलायम से लगाव केवल सत्ता-लोभ के कारण नहीं, बल्कि पारिवारिक और सैद्धांतिक भी रहा है. इस प्रकरण में केवल शिवपाल के समर्थक अलग-थलग पड़े. उनकी बाकायदा शिनाख्त हुई और उससे अखिलेश यादव आगाह हुए. चुनाव आयोग का आधिकारिक दस्तावेज देखें तो उसमें आपको समाजवादी पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी के 46 सदस्यों में से 31 सदस्यों, 229 विधायकों में से 205 विधायकों, 68 विधान परिषद सदस्यों (एमएलसी) में से 56 एमएलसी, लोकसभा के पांच सदस्यों में से चार सदस्यों, राज्यसभा के 19 सदस्यों में 11 सदस्यों और पार्टी के कुल 5731 डेलीगेट्स में 5242 डेलीगेट्स के अखिलेश यादव के समर्थन में किए गए हस्ताक्षर मिलेंगे. सपा के एक नेता ने यह सवाल रखा कि क्या ये हस्ताक्षर मुलायम की सहमति के बगैर हो गए? अखिलेश की पत्नी डिम्पल और रामगोपाल के बेटे अक्षय को छोड़ कर अन्य दो सांसद धर्मेंद्र व तेज प्रताप क्या मुलायम की 'आज्ञा' के बगैर इधर-उधर कर सकते थे? उक्त सपा नेता बड़ी तल्खी से कहते हैं, नेताजी को अखिलेश को उभार कर उत्तराधिकार ही सौंपना था और शिवपाल खेमे को धराशाई ही करना था तो इतनी नौटंकी करने की क्या जरूरत थी? इसके और भी राजनीतिक तरीके हो सकते थे. इसके लिए जनता के मनोविज्ञान से खेलने की क्या जरूरत थी'? आप स्थितियों को भी देखें तो इस कथन में कितना दम है, पता चल जाता है. चुनाव आयोग के समक्ष मुलायम एक बार भी यह मानने को तैयार नहीं हुए कि पार्टी में कोई 'स्प्लिट' (विभाजन) है. जबकि चुनाव आयोग ने समाजवादी पार्टी में स्पष्ट विभाजन (स्प्लिट) मानते हुए ही इस मामले पर सुनवाई की और अपना फैसला सुनाया. साफ है कि मुलायम यह जानते थे कि पार्टी में कोई 'स्प्लिट' नहीं है, वे पार्टी से केवल अखिलेश के भविष्य की आशंकित अड़चनों को 'स्प्लिट' करना चाहते थे, जिसमें वे कामयाब हुए. यही वजह है कि पार्टी में चर्चा इस बात की नहीं है कि अखिलेश के समर्थन में कितने लोगों ने हस्ताक्षर किए, बल्कि शिनाख्त उन लोगों की हो रही है जिन लोगों ने अखिलेश के समर्थन में हस्ताक्षर नहीं किए. जिस तरह मुलायम शुरू से ही कहते रहे कि अखिलेश से कोई विवाद नहीं, उसी तरह अखिलेश भी लगातार यह कहते रहे हैं कि उनका पिता मुलायम सिंह से कोई विवाद नहीं है.

बहरहाल, अब लोगों के सामने यह साफ हो चुका है कि अखिलेश का विवाद किससे था और मुलायम किस तरह शिवपाल के कंधे पर हाथ रख कर विवाद को निपटाने में लगे थे. अनुशासनहीनता के आरोप में निवर्तमान प्रदेश अध्यक्ष शिवपाल यादव ने जिन लोगों को पार्टी से निकाला था, उन सब को नए राष्ट्रीय अध्यक्ष अखिलेश यादव के आदेश पर पार्टी में वापस ले लिया गया है. इनमें पवन पांडेय, सुनील यादव साजन, अरविंद यादव, उदयवीर सिंह, आनंद भदौरिया, संजय लाठर, गौरव दुबे, मोहम्मद एबाद, बृजेश यादव, दिग्विजय सिंह देव जैसे तमाम अखिलेश समर्थकों के नाम शामिल हैं. इनकी वापसी के बारे में कहा गया कि अनुशासनहीनता करने वाले उक्त सभी नेताओं ने मुलायम सिंह से माफी मांग ली तो उनकी पार्टी में वापसी हो गई और उनके सांगठनिक पद भी बहाल कर दिए गए. लेकिन जिन लोगों ने पार्टी दफ्तर पर हमला बोल कर तोड़फोड़ की और शिवपाल यादव की नेमप्लेट उखाड़ कर जूतों से रौंदा था, उन लोगों की उस सार्वजनिक अनुशासनहीनता पर कार्रवाई क्यों नहीं हुई, या शिवपाल जैसे वरिष्ठ नेता से माफी मंगवा कर उन्हें पार्टी में वापस लेने का निर्णय क्यों नहीं हुआ? लेकिन नैतिकता से जुड़ा यह सवाल मौजूदा दौर में कहां उठता है!

पिता मुलायम के आदेश और दिशा-निर्देशन में अखिलेश अब चुनाव में उतरने को तैयार हैं. अब वे खुद पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष हैं, लिहाजा, टिकट पर आखिरी निर्णय भी अखिलेश का ही होगा. मुलायम ने अखिलेश को 38 लोगों की सूची सौंप कर उन पर विचार करने का अखिलेश से आग्रह करने का फिर एक प्रहसन खेला. सब जानते हैं कि 38 लोगों की इस सूची में शिवपाल समर्थक नेताओं के नाम हैं, जिन्हें टिकट मिल भी जाए फिर भी अब तो वे 'दागी' ही हैं. अखिलेश ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहते जिससे भविष्य में सत्ता-निर्माण में कोई अवरोध खड़ा होने की संभावना हो. लिहाजा, कई मंत्रियों और विधायकों का टिकट कट सकता है, चेहरे बदल सकते हैं, या चुनाव में उनकी पराजय का चक्रव्यूह रचा जा सकता है. आपराधिक छवि के लोगों में से जिनके चेहरे अखिलेश को पसंद नहीं हैं, उन्हें चुनाव लड़ने का मौका नहीं मिलेगा, अन्य को मिल रहा है. कांग्रेस से संभावित गठबंधन के बहाने भी अखिलेश कई सपाइयों को निपटाने की तैयारी में हैं. चुनाव आयोग से फैसला आने के पहले ही अखिलेश ने अपनी 'कोर' टीम गठित कर ली थी, जो चुनाव प्रबंधन देखेगी. गोया उन्हें पहले से पता था कि क्या होने वाला है. इस कोर-टीम में विधान परिषद के 25 सदस्यों को चुना गया है. अखिलेश की यह स्पेशल टीम चुनाव के काम में समाजवादी पार्टी के कार्यकर्ताओं की मदद भी करेगी और उन पर निगरानी भी रखेगी.

सपाई 'येलो-ड्रामा' का ही पीत पक्ष है जसवंत नगर सीट से चुनाव लड़ने के लिए शिवपाल के बेटे आदित्य यादव का पहले नाम उछाला जाना. लेकिन शिवपाल ने पुत्र-मोह में फंसने का विचार छोड़ जसवंत नगर सीट से चुनाव लड़ने का निर्णय ले लिया. आदित्य का नाम सामने आने के बाद चर्चा यह निकली कि शिवपाल ही पुत्र मोह में अपनी सीट आदित्य के लिए छोड़ना चाहते हैं. ऐसा होने से शिवपाल भी पुत्र-मोही मुलायम के समानान्तर जा खड़े होते. यह बात तो जगजाहिर थी ही कि अखिलेश अपने चाचा शिवपाल को टिकट नहीं देना चाहते हैं. शिवपाल जसवंत नगर सीट से चुनाव लड़ना चाहते थे और सपा से टिकट नहीं मिलने की स्थिति में उनके राष्ट्रीय लोक दल के सिम्बल से चुनाव लड़ने की बात चल रही थी. यह बात चर्चा तक सीमित नहीं थी, क्योंकि शिवपाल और उनके समर्थकों के राष्ट्रीय लोकदल के चुनाव निशान (सिम्बल) पर चुनाव लड़ने की द्विपक्षीय वार्ता चल रही थी. चुनाव आयोग का फैसला आने के बाद शिवपाल आगे के कदम के लिए कानूनी सलाह भी ले रहे हैं. राष्ट्रीय लोक दल ने आधिकारिक तौर पर कहा भी कि शिवपाल यादव से जुड़े सपा विधायक या नेता, जिन्हें सपा से टिकट नहीं मिलेगा, वे लोक दल के टिकट पर चुनाव लड़ सकते हैं. राष्ट्रीय लोक दल ने शिवपाल के समक्ष यह प्रस्ताव रखा था कि टिकट से वंचित सपाई रालोद के टिकट से चुनाव लड़ सकते हैं. यही वजह है कि महागठबंधन के लिए चल रही कोशिशों में अखिलेश ने रालोद को दूर कर दिया. इस चर्चा के बाद शायद अखिलेश खेमे का लगा कि शिवपाल का रालोद के साथ जाना नुकसानदेह हो सकता है, तो फौरन शिवपाल को जसवंत नगर सीट से सपा का आधिकारिक प्रत्याशी घोषित कर दिया गया. समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष अखिलेश यादव ने 20 जनवरी को जिन 36 ज़िलों के लिए 191 उम्मीदवारों की घोषणा की, उसमें शिवपाल यादव का नाम तो है, पर शिवपाल समर्थकों का नाम चुन-चुन कर काटा गया है. माफिया सरगना अतीक अहमद का नाम कटा, लेकिन अखिलेश समर्थक कई अपराधी छवि के लोगों को टिकट मिला. शिवपाल समर्थक कई साफ छवि के लोगों का नाम काटने का कोई तर्क नहीं है. पहली ही लिस्ट आगे की प्राथमिकताओं का दर्शन करा रही है.

मुलायम की छत्रछाया में रहने वाले किरणमय नंदा अब अखिलेश के साथ हैं. महागठबंधन के प्रयासों में नंदा भी काफी सक्रिय रहे. रालोद से गठबंधन को लेकर हुई बातचीत के बारे में पूछने पर नंदा कहते हैं कि सपा रालोद से कोई बात ही नहीं कर रही है. वे कहते हैं कि रालोद महागठबंधन में शामिल होगा कि नहीं, यह कांग्रेस तय करेगी. उधर, कांग्रेस ने भी रालोद को 'लिफ्ट' नहीं दिया. चौधरी अजित सिंह के पुत्र व रालोद के महासचिव जयंत चौधरी की इस सिलसिले में पिछले दिनों प्रियंका गांधी से हुई मुलाकात भी बेनतीजा ही रही. कांग्रेस पार्टी को सपा को भी कोई अधिक तरजीह नहीं दे रही है. कांग्रेस जिन सीटों पर अपना अधिकार जता रही है, उन सीटों पर सपा का पहले से कब्जा है. खास तौर पर अमेठी और रायबरेली की सीटें कांग्रेस अपने हाथ में रखना चाहती है. सपा के राष्ट्रीय महासचिव किरणमय नंदा कहते हैं कि सपा कांग्रेस को अधिकतम 85 सीटें दे सकती है. लेकिन (खबर लिखे जाने तक) कांग्रेस इसके लिए राजी नहीं थी. नंदा यह भी कहते हैं कि पिछले विधानसभा चुनाव में कांग्रेस जिन सीटों पर पहले या दूसरे नम्बर पर रही थी और जिन पर सपा तीसरे, चौथे या पांचवें नम्बर पर रही थी, वे कांग्रेस को दी जा सकती हैं. इस हिसाब से कांग्रेस को 54 सीटें ही मिलनी चाहिए. ■

feedback@chauthiduniya.com

भगोड़ों के भरोसे जंग जीतना चाहती है भाजपा

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी कहते रहें कि पार्टी में परिवारवाद का बढ़ना खतरनाक है, लेकिन टिकट बंटवारे में परिवारवाद और जातिवाद भीषण हावी है. अब तो भाजपा में बाहरीवाद का भी प्रकोप बढ़ता जा रहा है. इन वजहों से भारतीय जनता पार्टी झगड़े, कलह और बगावत से भरती जा रही है. पार्टी के दिल्ली, देहरादून और लखनऊ दफ्तरों पर जबरदस्त विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं. यहां तक कि लखनऊ में आत्मदाह तक की कोशिशें दर्ज हो गईं. उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में जगह-जगह पर विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं और भाजपा नेतृत्व को चुनाव में औकात दिखा देने की चुनौतियां मिल रही हैं. बाहरी दलों से आए नेता अपनी भारी लिस्ट पर अड़े हैं और खुलेआम दूसरी पार्टी का दर देखने की धमकियां दे रहे हैं. जो नेता ऐन लोकसभा चुनाव में भाजपा में शरीक हुए और मोदी लहर में जीत कर सांसद बन गए, वैसे नेता भी अपने-अपने रिश्तेदारों को टिकट दिलाने के लिए एड़ी चोटी का जोर लगाए हैं. भाजपा कार्यकर्ताओं का कहना है कि पार्टी से जुड़े मूल कार्यकर्ताओं को टिकट का अवसर नहीं दिया गया तो यह पार्टी के लिए नुकसानदेह साबित होगा. बसपा से भाजपा में आए स्वामी प्रसाद मौर्य की अपनी शर्तें हैं तो बृजेश पाठक की अपनी. अब तो नारायण दत्त तिवारी की शर्तें भी भाजपा को पूरी करनी हैं.

राजनीतिक समीक्षक मानते हैं कि अपने मूल काडर की उपेक्षा और बाहरी लोगों को टपकाने का आकर्षण भाजपा को ले डूबेगा. उत्तराखंड भाजपा में लगी कांग्रेसियों की लगी लंबी कतार भी भाजपा को मुश्किलों में ही डालने वाली है. पहाड़ में यह चर्चा भी आम है कि भाजपा में व्यक्तित्वों का इतना टोटा पड़ गया है कि अमित शाह नारायण दत्त तिवारी जैसे चुके हुए नेताओं को पार्टी में जुटा रहे हैं. यूपी भाजपा के एक नेता बोले, 'जो पार्टी अपने लिए मुख्यमंत्री का चेहरा तक तय नहीं कर पा रही, वह भगोड़े चेहरों के भरोसे जंग जीतना चाहती है.'

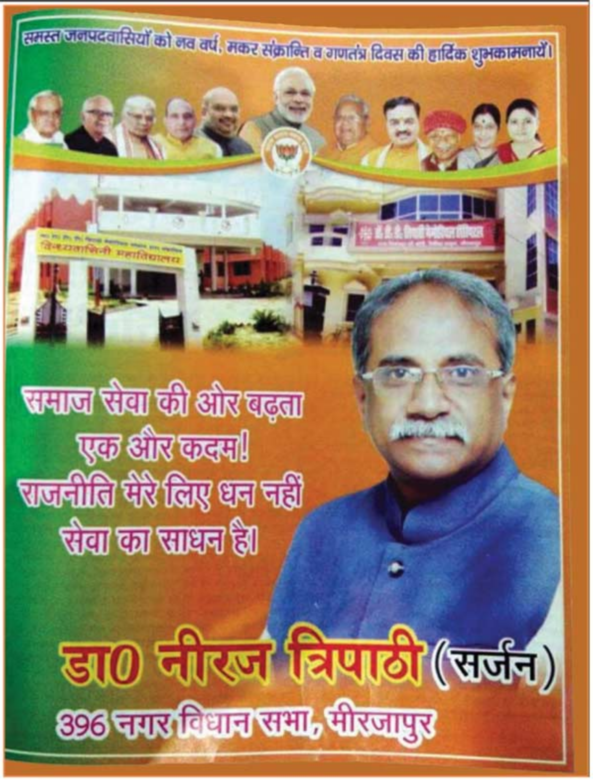

मोदी जी का चित्र परिवर्तन

गिरिराज किशोर

आज खादी ग्रामउद्योग के कलैंडर और डायरी से सरकार द्वारा गांधी जी को विदा कर दिया गया. इस गोपनीय विदाई की सूचना सभी समाचार पत्रों में है. यह भी लिखा है कि इस बात पर केवीआईसी के कर्मचारी दुखी हैं. मुंबई में उन्होंने विरोध प्रदर्शन किया. केवीआईसी बहुत पहले से भारत सरकार का उपक्रम है.

मुझे याद आ गया कि गांधी जी ने पहले चर्खे का नाम सुना था, देखा नहीं था. दरअसल अंग्रेज़ों के आने के बाद घरेलू उद्योग लगभग ख़त्म हो गए थे. कताई बुनाई तो बिल्कुल बंद हो गई थी. बापू ने सुना था कि पहले महिलाएं घरों में चरख़ा चलाती थीं, अपनी ज़रूरत का कपड़ा खड्डी पर बुन लेती थी. उनके दिमाग में निरंतर यह बात काम कर रही थी अगर चर्खा मिल जाए तो महिलाएं जो इस पर निर्भर हैं, एक सीमा तक आत्मनिर्भर बन सकती हैं. तलाश करते करते उन्हें गंगा बहिन मिली. गंगा बहिन के बारे में गांधी जी ने लिखा है कि उसने अपने को जातिय सीमाओं से मुक्त कर लिया था. बापू ने गंगा बहिन को अपनी समस्या से अवगत कराया. वह ढूंढ़ने निकल गई. बड़ौदा के पास किसी गांव में चर्खा मिल गया. गंगा बहन ने बताया कि कताई का काम इसलिए बंद हो गया कि पूनियां बननी बंद हो गई. कताई और बुनाई दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं उसका आधार पूनियां हैं. गांधी जी ने शायद मगनभाई की सहायता से उस चर्खे में कुछ परिवर्तन किए और 1917 में वह चर्खा अवतरित हो गया. इस साल चर्खे और साथ ही खादी की शताब्दी है. यह भी कहा जा सकता कि खादी के माध्यम से स्वालंबन की शताब्दी है. इस वर्ष जब चर्खे और खादी के माध्यम से स्वालंबन की, अहिंसा की तरह, शताब्दी मनाई जानी चाहिए थी उल्टे गांधी जी को खादी की स्वायत्त संस्था से विदा कर दिया गया.

सबसे बड़ा सवाल गांधी जी के सामने पूनियां प्राप्त करने का था. गांधी जी ने कपड़ा फ़ैक्ट्री चलाने वाले एक मित्र से अपनी समस्या बताई तो उसने अपनी फ़ैक्ट्री से पूनी बनवाकर भिजवाने का प्रबंध कर दिया. लेकिन कुछ दिन बाद उन्होंने इस प्रबंधन को बदल दिया. उन्हें फ़ैक्ट्री से मंगा कर विलायती रुई की पूनी कातना ठीक नहीं लगा. वे चाहते थे कि कपास की पूनी से बनी पूनियों से बनी खादी ही खादी हो सकती है क्योंकि उसके माध्यम से खादी में किसान का श्रम जीवित रहेगा. गंगा बहिन ने मदद की और तीस रुपए प्रति माह पर रुई धुनने वाले एक पुम्बे को रखवा दिया. वह कपास धुनकर पूनिया बनने लगा. यहां तक की उसने बच्चों को भी पूनियां बनाना सिखाया. चर्ख़े का पुनर्आविष्कार करके उसे सक्रिय करने की जद्दोजहद में उनको काफ़ी उद्यम करना पड़ा. फिर गांधी जी बंबई चले गए, वहां वे बीमार पड़ गए वहां कमरे में ही चार महिलाओं को चर्खा चलाने की दीक्षा दी. गांधी जी ने गुजरात की महिलाओं को रोज़गार का और साथ ही समय के सदुपयोग करने का विकल्प भी दिया जो बाद में देशव्यापी हो गया.

जब मैं खादी की संस्था के कलेंडर से गांधी जी की विदाई की घटना को देखता हूं तो मुझे आइन्सटाइन की जगह किसी फ़िजिक्स पढ़ाने वाले शिक्षक को महत्त्व देने की सी बात लगती है. यह बात सही है कि विज्ञापन में किसी का भी फ़ोटो लगा कर उसे ब्रांड बनाया जा सकता है. लेकिन जिस सामाजिक वैज्ञानिक की प्रेरणा या उद्यम से उपलब्धि होती है क्या उसका नाम स्वत: प्रेरक नहीं है. जो तर्क दिए जा रहे हैं वे बड़े नामाकूल और गलती पर पर्दा डालने वाले से लग रहे हैं. दरअसल यह अनभिज्ञता से अधिक एक गांधी का अवमूल्यन की सोची समझी साज़िश है. यह सुनने में आया चूंकि मोदी जी ने प्रधानमंत्री के रूप में पांच सौ चर्ख़े बांटे थे,

खादी की बिक्री बढ़ाने में सहायता की थी इसलिए गांधी का चित्र हटा कर मोदी जी का चित्र छापकर, खादी उद्योग, सरकार के एक उपक्रम ने, मोदी जी को सौ साल की साधना का श्रेय मेहनताने की रूप में देने के लिए गांधी जी को विस्थापित किया गया है. क्या उसकी उनको ज़रूरत थी, वे तो प्रधानमंत्री हैं, सारे श्रेय उनके नाम हैं. क्या उनसे पूछा गया था. पूछा तो गया ही होगा. वरना किसकी मजाल कि उनका एक मातहत विभाग चित्र छाप देता. सुना है पीएमओ नाराज़ है बिना पूछे चित्र क्यों छापा. उनकी नाराज़गी वास्तविक कम आरोपित अधिक है. मुझे एक पोस्ट में छपा कार्टून याद आ रहा है. बापू की गोद में बच्चे की तरह मोदी जी लेटे हैं और कह रहे हैं कि बापू मैं चाहता हूं आपकी तरह... मेरा फ़ोटो नोट पर छपे. उस सपने को एक मातहत विभाग ने पूरा कर दिया. दरअसल बताया जाता है केवीआईसी के वर्तमान अध्यक्ष अंवानी की सेवा में थे. वे ब्रांड, बिक्री, लाभ की भाषा की बात समझते हैं. वे खादी को जीवन-मूल्य न मानकर उत्पाद मानते हैं. एक बात और है प्राइवेट संस्थान की सभ्यता है, अपने बास को सर्वोपरि मानना. उसकी खुशी के लिए सब कुछ न्यौछावर. वैसे भी खादी के पीछे त्याग और संघर्ष की परंपरा है, मोदी जी लाभ और उत्पादन में विश्वास करते हैं. यह महत्त्वपूर्ण नहीं किसका नुकसान होगा. यह नोटबंदी से स्पष्ट हो गया. कितने लोग लाइन में खड़े खड़े मर गए, कितनी बेटियों की शादियां टूट गई. कितने घरों में पैसा न होने के कारण शव पड़े रहे, मज़दूरों को बेकाम हो जाना पड़ा, जो अभी भी जारी है.

संबित पात्रा इस घटना के समर्थन में तर्क दे रहे थे कि बीच में 6 या 7 साल कैलेंडर पर गांधी जी का चित्र नहीं छपा था. उन सालों में क्या किसी प्रधानमंत्री या मंत्री का छपा था, क्या यह पात्रा ने नहीं बताया. वे यह जानते हैं कि कितनी बात बतानी है, कितनी नहीं. ख़ैर, इसका मतलब यह तो नहीं कि अगर कोई जगह ख़ाली नज़र आ जाए, उसे हथिया लो, चादर बिछाकर बैठ जाओ. गांधी और खादी संस्थान एक विचार है दुकान नहीं, हालांकि दुकान बनाया जा रहा है, उन मूल्यों की हत्या करके खादी, जन-उत्पाद नहीं रहेगा कॉर्पोरेट उत्पाद हो जाएगा. मोदी जी हो सकता है ना जानते हों या न मानते हों, पर देश विदेश में करोड़ों लोग मानते हैं. दूसरी बात उन्होंने कही कि कोई फ़र्क नहीं पड़ता किसका फ़ोटो कैलेंडर पर छपता है, मात्र बिक्री ही खादी का उद्देश्य नहीं बल्कि त्याग और सेवा की प्रेरणा का माध्यम भी है. हरियाणा के स्वास्थ्य मंत्री ने तो खुशामद में सीमा पार कर दी. कहा, गांधी जी के चित्र से खादी का मूल्य घटा है. मोदी का व्यक्तित्व गांधी से बड़ा है. ठीक ही है, अपना पालक किसी से भी बड़ा लगता है. सरकार द्वारा गलत-सही करेंसी छपवा कर जनता को भेजने से नहीं फ़र्क पड़ा. पात्रा जी फ़र्क तो पड़ता है, मोदी जी सत्ता साधक व्यक्ति हैं, गांधी जी अपरिग्रह साधक हैं.

कबीर की गद्दी कभी किसी वज़ीर या बादशाह ने लेने की कोशिश नहीं की. वे भी इस भेद को जानते थे. यह ज़रूरी नहीं आप विवेक को खोकर जो आपको दिखे, उसे ही जन जन पर थोप दो. मोदी जी के बारे में बताया जा रहा था वे सदा खादी पहनते हैं. क्या वह सूट भी खादी का था जिसे पहनकर बराक का स्वागत किया था. गांधी जी तो लंदन, सम्राट से, अर्धनग्न हालत में खादी की चादर ओढ़ कर मिले थे.

आपके मंत्री आपको वास्तविकता नहीं बताएंगे. वे यही कहेंगे कि आप गांधी से बड़े हैं, क्योंकि आपने बिक्री बढ़ाई है. कभी सोचा है कि जिसने खादी को जन्म दिया, लाखों तक पहुंचाया वह बड़ा है या वह बड़ा है जो उसकी बिक्री बढ़ाने में विज्ञापन का माध्यम बना. बिक्री तो किसी भी वस्तु की कभी भी गिर सकती है. खादी तो शाश्वत है. ■

feedback@chauthiduniya.com

लेखक, प्रकाशक और पैसे का तिलिस्म

अनंत विजय

दिल्ली में विश्व पुस्तक मेला खत्म हो गया. मेले के दौरान सोशल मीडिया पर लेखकों का उत्साह देखते ही बन रहा था. जिस लिहाज से सोशल मीडिया पर किताबों के छपने और उसके लोकार्पित होने की तस्वीरें पोस्ट हो रहे थे उससे तो यही लगता है कि कम से कम प्रकाशकों पर नोटबंदी का कोई असर नहीं पड़ा है. पुस्तक मेले में आ रही किताबों को देखकर भी यही लग रहा था कि कविता संग्रह तक छापने में प्रकाशकों के सामने कोई दिक्कत नहीं है. थोक के भाव से कविता संग्रहों के प्रकाशन की सूचना सोशल मीडिया पर साझा की गई लेकिन भगवानदास मोरवाल ने जो सर्वे करवाया उसमें यह निकलकर आया कि मेले से हिंदी कविता लगभग पूरी तरह अनुपस्थित है. प्रकाशकों के स्टॉल्स पर एक के बाद एक, कहानी संग्रह और उपन्यासों के लोकार्पण और उन पर चर्चा कराई जा रही है, या हो रही है वहां कविता एक तरह से उपेक्षित सी रही है. हिंदी के बड़े कवि कुंवर नारायण, केदारनाथ सिंह, अशोक वाजपेयी, विष्णु खरे, मंगलेश डबराल, लीलाधर जगूड़ी, उदय प्रकाश, कृष्ण कल्पित, अनामिका, सविता सिंह, नरेश सक्सेना, लीलाधर मंडलोई, मदन कश्यप का कोई कविता संग्रह मेले में नहीं आया. इसके अलावा भी संजय कुंदन, पवन करन, संजय चतुर्वेदी, कात्यायनी, अनीता वर्मा जैसे उनके बाद की पीढ़ी के कवियों के संग्रह भी प्रकाशित नहीं हुए. इस सर्वे के मुताबिक लगभग यही स्थिति फेसबुक से उपजे युवा कवि-कवयित्रियों की भी रही. चर्चा हुई भी होगी तो उस तरह नहीं जिस तरह मंचीय कवियों और ग़ज़लों के नाम पर लोकप्रिय शायरी को प्रोत्साहित किया जा रहा है.

पुस्तक मेले के दौरान कुछ नए प्रकाशकों ने लेखकों, कवियों, कहानीकारों की प्रसिद्ध होने की चाहत में अपने कारोबार का रास्ता ढूंढ लिया था. कविता संग्रह या कहानी संग्रह छपवाने के लिए लेखक कवि पैसे खर्च करने के लिए तैयार थे. कविता संग्रह का रेट तीस हजार के करीब बताया जा रहा जिसमें तय ये होता है कि जितने पैसे लेखक देगा उतने मूल्य की किताब उनको दे दी जाएगी. हालांकि ये कोई नई प्रवृत्ति नहीं है. ये पहले से होता आया है लेकिन अब सांस्थानिक रूप से होने लगा है. पहले प्रकाशक भी और लेखक भी छिप छिपाकर ये काम करते थे लेकिन अब तो बकायदा करार करने के बाद ये काम हो रहा है. हिंदी के कई प्रकाशक तो अब खुलकर इस कारोबार में आ गए हैं. तकनीक ने इस काम को और आसान बना दिया है. डिजीटल प्रिंटिंग से किताबें छापने की सहूलियत के बाद तो एक प्रति से लेकर पच्चीस प्रति तक छापने की छूट मिल गई है. लेखक या प्रकाशक जितना चाहे या फिर जितनी प्रतियों का सौदा हो जाए उतनी प्रतियां छाप ली जाती हैं. डिजीटल प्रिंटिंग से निकाली गई किताब छपाई की अन्य तकनीक के मुकाबले देखने में सुंदर भी लगती है. विमोचन या लोकार्पण के वक्त उसकी तारीफ भी हो जाती है. सोशल मीडिया पर खूबसूरत कवर आदि पोस्ट होने से लेखक को वहां प्रसिद्धि भी मिल जाती है. लाइक्स से लोकप्रियता भी तय हो जाती है.

इस प्रवृत्ति के बढ़ने पर सवाल नैतिकता का नहीं है, किसी भी लेखक को अपनी किताब अपने धन से छपवाने का पूरा हक है. अगर लेखक के पास पैसा है और प्रकाशक छापने के लिए तैयार है तो किसी का भी इसपर आपत्ति उठाना गलत है. सवाल तो पारदर्शिता का है. जो भी किताब लेखक के पैसे या सेल्फ फाइनेंसिंग स्कीम के तहत छपें उस किताब पर यह बात छपी होनी चाहिए. इससे पाठकों को लेखक को समझने में सहूलियत होगी. पाठकों को पता होगा

कि अमुक कृति लेखक ने खुद छपवाई है और फलां कृति प्रकाशक ने अपनी पूंजी से छपवाई है. फेसबुक पर मीडिया पर पेड न्यूज़ को लेकर हमलावर दिखने वाले नैतिकता के साहित्यिक ठेकेदार इस प्रवृत्ति पर मुंह खोलने को तैयार नहीं दिखाई देते हैं. ना ही प्रकाशकों से रॉयल्टी का रार करने वाले लेखक इस तरह की मांग करते दिखाई देते हैं कि लेखक के पैसे से छपी किताबों पर इस बात का उल्लेख होना चाहिए. लेखकों के पैसे से छपी किताबों पर इस तरह की जानकारी का ना होना एक तरह से पाठकों का छल भी है. लेखकों के संगठन भी इस मसले पर खामोश हैं. सहिष्णुता, असिहष्णुता जैसे मुद्दों पर एक मंच पर आनेवाले लेखक संगठन और अन्य साहित्यिक संगठन भी इस मुद्दे पर खामोश हैं. आखिर क्यों? क्या लेखकीय पारदर्शिता और ईमानदारी के मुद्दे पर इन संगठनों की खामोशी इनको कठघरे में खड़ा नहीं करती है.

अगर इस धंधे में पारदर्शिता आ जाए तो लेखक और भाषा दोनों का भला होगा. प्रकाशन के धंधे में अब तो कई कंपनियां ऐसी भी आ गई हैं जो प्रिंट ऑन डिमांड का काम कर रही हैं. इनके काम करने का तरीका ये होता है कि जितनी प्रतियों का आदेश मिलता है वो इतनी ही प्रतियां छाप कर ग्राहक को भेज देते हैं. पहले वो ऑनलाइन स्टोर में किताब का कवर और उसका परिचय पोस्ट करवाते हैं और जैसे जैसे ग्राहक किताब का आर्डर करते हैं वैसे वैसे छाप कर ग्राहकों को भेजते रहते हैं. आदेश मिलने के चौबीस घंटे के अंदर किताब छपकर ग्राहक को भेज दिया जाता है. यह काम किसी भी किताब के लिए अंतरराष्ट्रीय बाजार में ग्राहकों तक पहुंचने का बेहतर रास्ता है. अगर अमेरिका में बैठा कोई पाठक अमुक लेखक की किताब खरीदना चाहता है तो वो ऑनलाइन स्टोर में उसका आदेश देता है और उसी देश का प्रकाशक उस किताब को छापकर ग्राहक को भेज देता है. यह तकनीक की सहूलियत है और इसका फायदा हिंदी के लेखकों को उठाना चाहिए. बजाए बाजार का फायदा उठाने के हिंदी के वैसे लेखक जो फौरी प्रसिद्धि चाहते हैं वो उसके ट्रैप में फंस जा रहे हैं. सेल्फ फाइनेंसिंग बुरी बात नहीं है, बुरा है इसका गुपचुप तरीके से होना. अगर किसी लेखक के पास पैसा है तो वो इसको साहित्य में निवेश करना चाहता है तो इसको सोच समझ कर इस तरह से निवेश किया जाना चाहिए कि लेखक के फायदे के साथ साथ साहित्य का भी भला हो. इस तरह की प्रवृत्ति पर वृहत्तर लेखक समुदाय को मिल बैठकर बात करनी चाहिए वर्ना आनेवाले दिनों में इसका जो सबसे बड़ा नुकसान दिखाई देता है वह है साहित्य की साख पर बट्टा. जिसके भी पास पच्चीस तीस हजार रुपए होंगे वो अपनी किताब छपवाकर बेचने लग जाएगा. किसी भी प्रकार अगर वो दो चार पाठकों को बेचने में भी सफल हो जाता है तो उन दो चार पाठकों का तो मोहभंग होगा और वो अपने को ठगा हुआ महसूस करेगा. लेखक संगठनों को, लेखकों को, अकादमियों को इस बारे में गंभीरता से विचार करना चाहिए और पारदर्शिता के बारे में जरूरी कदम उठाने चाहिए. सोचना तो भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय को भी चाहिए जो पुस्तकों को छपने के पहले आईएसबीएन नंबर प्रदान करती है. नंबर देने के पहले उसको प्रकाशकों से यह जानकारी देना अनिवार्य कर देना चाहिए कि किसी पूंजी से इस पुस्तक का प्रकाशन हो रहा है. अगर ऐसा हो पाता है तो इसके दीर्घकालिक परिणाम होंगे और साहित्य का भला होगा. साख तो कायम रहेगी ही. ■

anant.ibn@gmail.com

साईं वंदना

साईं भक्ति-प्रवाह के रहस्य

सद्गुरु ईश्वरीय शक्ति एवं गुणों से युक्त होते हैं

पिछले अंक से आगे

डॉ. चन्द्रभानु सतपथी

चेतना के विकास की इस प्रक्रिया को यदि शिष्य पर ही छोड़ दिया जाए, तो उसके विकास की यह प्रक्रिया इतनी धीमी हो जाती है कि मुक्त होने में कई जन्म लग सकते हैं. जैसा कि प्राकृतिक नियम का विधान है कि इस भू-मंडल पर हर प्राणी की चेतना अपने हर जन्म में सुख एवं दु:ख उत्पन्न करने वाली असंख्य घटनाओं के अनुभव से गुजरते हुए निरंतर विकसित होती रहती है. सद्गुरु आध्यात्मिक चेतना के क्रमिक विकास का स्वयं अनुभव कर परम ईश्वरीय अवस्था में पहुंचे हैं. यह आध्यात्मिक-मार्ग उनका देखा हुआ है. चूंकि उन्हें आध्यात्मिक-पथ का पूर्ण ज्ञान है, इसीलिए सद्गुरु अपने भक्तों के आध्यात्मिक-मार्ग का प्रवर्तन करने में समर्थ हैं. बिना सद्गुरु की सहायता के साधक बारंबार गलतियां करता है. अपनी गलतियों से कुछ सीखता है तथा फिर गलतियों को दोहराता है. इस प्रकार उसकी चेतना के विकास की प्रक्रिया बहुत धीमी हो जाती है. लेकिन यदि कोई व्यक्ति सद्गुरु को अपना सर्वस्व/नियंता मान ले और उनकी शिक्षाओं एवं उपदेशों के अनुरूप आचरण करे, तो ऐसे व्यक्ति की चेतना का विकास बहुत आसानी एवं तीव्रता से होता है. सद्गुरु ईश्वरीय शक्ति एवं गुणों से युक्त होते हैं. यही कारण है कि उनकी इस अपार क्षमता के फलस्वरूप वे अपने संपर्क में आने वाले सभी प्राणियों की चेतना के विकास की गति को तीव्र करते हैं. इसीलिए उन्हें 'समर्थ' (अर्थात् ईश्वरीय अनुभव प्रदान करने में सक्षम) सद्गुरु कहते हैं. लेकिन सद्गुरु द्वारा इस दिशा में निरंतर प्रयास करने पर भी सभी भक्त समान गति से आध्यात्मिक प्रगति नहीं कर पाते. भक्त की चेतना के विकास की गति कुछ मुख्य बातों पर आधारित है, जैसे-

- **बौद्धिक एवं भावात्मक-** दोनों प्रकार से सद्गुरु के प्रति निष्ठा रखना कि आध्यात्मिक यात्रा में श्री गुरु ही एकमात्र पथ-प्रदर्शक और संरक्षक हैं.
- सद्गुरु के प्रति पूर्ण विश्वास रखते हुए उनकी शिक्षाओं, उपदेशों एवं आदेशों के अनुरूप आचरण करना और
- अंतत: जीवन में चाहे कितने ही लंबे समय तक कितनी भी विषम परिस्थितियां क्यों न आए, फिर भी दृढ़तापूर्वक सद्गुरु के आदेशों और उपदेशों के मर्म को समझ कर उनके बताए हुए रास्ते पर चलना.

सामान्यत: बाबा जैसे सद्गुरु अपने आदेशों का पालन करने के लिए अनच्छिुक भक्तों पर कभी भी दबाव नहीं डालते. भक्तों के जो हित में हो वैसा करने का सुझाव कभी वे (शब्दों के द्वारा, व्यवहार एवं साक्षात् अनुभव आदि रूप में) प्रत्यक्ष रूप से और/या (स्वप्नों के माध्यम से, कथाओं, संकेतों एवं किसी अन्य माध्यम आदि द्वारा) अप्रत्यक्ष रूप से अपने प्रत्येक भक्त या कभी-कभी भक्त-समूह को देते थे. कभी-कभी बाबा रहस्यमय बातें करते थे, कभी टूटे-फूटे वाक्यों में या कभी किसी दुरूह भाषा में कुछ बोलते रहते थे. बाबा ने किस संदर्भ में, किस विषय पर क्या कहा, जब भक्तगण इस विषय में मन ही मन बहुत लंबे समय तक चिंतन करते थे, जब जाकर वे बाबा द्वारा कही गई बातों का अर्थ क्रमश: समझ पाने में समर्थ हो पाते थे. बाबा अपने भक्तों की समस्याओं का सीधा समाधान भी कर सकते थे, लेकिन उनका तरीका ऐसा था कि वे (भक्तों को) प्रत्यक्ष अनुभव के

मार्ग में लेकर उनकी प्रगति करना चाहते थे, ताकि लोग आत्म-विश्लेषण की प्रक्रिया से गुजर कर स्वयं अपनी समस्याओं के हल निकालें. बहुत बार वे कुछ भक्तों से यह पूछते रहते थे कि जब वे अन्य लोगों के साथ थे, तो क्या बात कर रहे थे. तब वे उन्हें विभिन्न उपायों से समझाते थे कि मन में बलपूर्वक आने वाले नकारात्मक या कुविचार, जिन्हें कि रोक पाना कठिन है, उनका सामना कैसे किया जाए और उनके स्थान पर सकारात्मक या अच्छे विचार उत्पन्न करने की आदत कैसे डाली जाए. सर्वज्ञ सद्गुरु अपने शिष्यों के बुरे एवं अच्छे विचारों पर सदैव सदैव नजर रखते थे और इस विषय में सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं. बाबा अपनी रहस्यमय सूक्ष्म शक्ति से भक्तों के मन को झकझोर कर उन्हें सोचने के लिए विवश कर देते थे और इस प्रकार भक्तों को अपनी समस्यओं का स्वयं समाधान करने का रास्ता दिखाते थे.

जारी...

चौथी दुनिया ब्यूरो feedback@chauthiduniya.com

साईं भक्तों! आप भी चौथी दुनिया को साईं से जुड़ा लेख या संस्मरण भेज सकते हैं. मसलन, साईं से आप कब और कैसे जुड़े. साईं की कृपा आपको कब से मिलनी शुरू हुई. आप साईं को क्यों पूजते हैं. कैसे बनें आप साईं भक्त. साईं बाबा का जीवन और चरित्र आपको किस तरह से प्रेरित करता है? साईं बाबा के बारे में अनेक किंवदंतियां हैं, क्या आपके पास भी कुछ कहने के लिए है? अगर हां, तो केवल 500 शब्दों में अपनी बात कहने की कोशिश करें और नीचे दिए गए पते पर भेजें.

सिंधु ने किया सायना का शिकार

पीबीएल में सिंधु के आगे सायना ढेर

चेन्नई स्मैशर्स बना प्रीमियर बैडमिंटन लीग का चैम्पियन

सैयद मोहम्मद अब्बास

भारतीय बैडमिंटन में सायना और सिंधु दोनों ही देश का गौरव है लेकिन कोर्ट पर हमेशा दोनों ही खिलाड़ी अपने खेल के लिए सुर्खियों में रहते हैं. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर दोनों ही खिलाड़ियों का डंका बजता है लेकिन दोनों के करियर में कई उतार चढ़ाव देखने को मिल चुके हैं. सायना जहां एक ओर अपनी पुरानी साख के लिए कोर्ट पर पसीना बहा रही है तो दूसरी ओर पीवी सिंधु लगातार देश का मान बढ़ाने में लगी हुई है. प्रीमियर बैडमिंटन लीग में दोनों ही खिलाड़ी अपनी-अपनी टीम की दावेदारी पेश कर रही थी लेकिन दोनों के बीच एक मुकाबले में सिंधु ने सायना के लचर प्रदर्शन का पूरा फायदा उठाते हुए चित कर दिया. प्रीमियर बैडमिंटन लीग के दूसरे सीजन का खिताब चेन्नई स्मैशर्स ने जीता. चेन्नई स्मैशर्स ने मुम्बई रॉकेट्स को एक बेहद कड़े संघर्ष में 4-3 हराकर खिताब पर कब्जा किया. इससे पूर्व टूर्नामेंट में सेमी फाइनल में सायना की टक्कर पीवी सिंधु से थी. सायना अवध वॉरियर्स की तरफ से खेल रही थी जबकि पीवी सिंधु चेन्नई स्मैशर्स की तरफ से खेल रही थी. सिंधु ने इस तरह से सायना से पुराना हिसाब भी बराबर कर लिया. सिंधु को इससे पूर्व सायना से हर बार हार का मुंह देखना पड़ा है. दोनों के बीच इस मुकाबले को देखने के लिए बैडमिंटन प्रेमियों में काफी हलचल देखी जा सकती थी. सिंधु ने इस मुकाबले में 11-7, 11-8 के बड़े अंतर से पराजित कर सनसनी फैला दी. दोनों ही खिलाड़ियों की फिटनेस में काफी अंतर देखा जा सकता है. प्रीमियर बैडमिंटन लीग के दूसरे सीजन में चेन्नई की टक्कर मुम्बई से थी. दोनों ही टीमों ने खिताब के लिए तगड़ी तैयारी की थी. मुम्बई की टीम एक समय 0-3 से पीछे थी लेकिन बाद में उसने शानदार वापसी की. स्कोर को 3-3 से बराबर करने के बाद सारा दारोमदार अंतिम मैच पर पड़ गया था. सिंधु ने उम्मीद के मुताबिक शुरुआती मैच में सुंग जी हयून को हराकर अपनी टीम को 3-0 से आगे कर दिया. देखा जाये तो एक बार फिर सिंधु कोर्ट पर लगातार प्रतिमान स्थापित कर रही है.

भारत की स्टार बैडमिंटन खिलाड़ी सायना नेहवाल की फिटनेस को लेकर भले कई कयास लगाये जा रहे हों लेकिन अब उन्होंने पुरानी लय हासिल कर ली है. दरअसल चोट के बाद सायना का प्रदर्शन उम्मीद के मुताबिक नहीं रहा है. साल 2016 के अंत में कोर्ट पर वापसी करने वाली सायना लगातार बड़े स्तर पर नाकाम साबित हुई. कई सुपर सीरीज में दूसरे दौर से आगे तक नहीं बढ़ पाई लेकिन साल 2017 में वह अलग तैयारी के साथ कोर्ट पर उतर रही है. प्रीमियर बैडमिंटन लीग के दौरान बैडमिंटन के कई बड़े खिलाड़ियों को धूल चटाने में कामयाब रही. प्रीमियर बैडमिंटन लीग के दौरान उन्होंने चौथी दुनिया से बातचीत में कहा कि फिटनेस को लेकर वह सर्तक है. सायना ने कहा कि यह साल उनके करियर के लिए बेहद अहम है. उनके अनुसार ऑल इंग्लैंड चैम्पियनशिप को ध्यान में रखकर अपनी फिटनेस को दोबारा हासिल करने की जुगत में है. उन्होंने साफ कहा कि अभी उनका करियर खत्म नहीं हुआ. भारतीय खिलाड़ियों में खासकर पीवी सिंधु के लगातार भारत का नाम रौशन कर रही है लेकिन सायना अब खराब फिटनेस के चलते कोर्ट से लगातार बाहर रही है. साल 2016 को पीछे छोड़ते हुए सायना ने साल 2017 में उम्दा शुरुआत की है. हालांकि प्रीमियर बैडमिंटन लीग के शुरुआती मुकाबलों में उन्हें कई बार निराशा हाथ लगी लेकिन बाद में उनका प्रदर्शन अच्छा रहा. मार्च में होने वाले ऑल इंग्लैंड चैम्पियनशिप के बारे में सायना का कहना है कि वह इस टूर्नामेंट में सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करना चाहती है. हालांकि इस टूर्नामेंट से पूर्व दो और अहम टूर्नामेंट है जिसमें सायना को चुनौती पेश करनी है. मोदी बैडमिंटन से भी सायना को अच्छी खासी उम्मीदें है. बैडमिंटन लीग के सहारे कई और युवा खिलाड़ियों ने भी अपनी छाप छोड़ी है.

भारतीय बैडमिंटन की सबसे भरोसेमंद चेहरों में एक सायना का अगर दिन रहा तो दुनिया के कई बड़े खिलाड़ियों को हराने का हौसला उनमें दिखता है. साल 2017 में पीबीएल उनके फिटनेस जांचने के लिए सबसे अहम टूर्नामेंट साबित हुआ. पीबीएल के एक मैच में उन्हें चोटी की खिलाड़ी कैरोलिना से हार का मुंह देखना पड़ा था लेकिन इसके बाद उन्होंने कोर्ट पर शानदार वापसी. जानकारों की मानें तो सायना को अभी अपनी फिटनेस पर और काम करने की जरूरत है. उनके कोच विमल कुमार की मानें तो सायना अब पूरी तरह से फिट है. उनके कोच के अनुसार सायना पीबीएल में अपनी फिटनेस को अच्छी तरह से परख सकती है. पैर और घुटने की चोट के बाद एक समय ऐसा लग रहा था कि सायना का करियर अब खात्मे की ओर बढ़ रहा है लेकिन कभी हार न मानने के जज्बे की कायल रही सायना ने एक बार फिर अपनी पुरानी लय हासिल करने में सफल रही. अवध वारियर्स की तरफ से आइकॉन खिलाड़ी के रूप में शामिल सायना ने अपने प्रदर्शन के बल पर अवध को कई मौकों पर जीत दिलाई. सायना के करियर में कई बार विवाद भी सामने आ चुके हैं. गोपीचंद ने उन्हें चोटी पर पहुंचाने में कोई कसर नहीं छोड़ी जबकि बाद में सायना ने उनसे अलग होने का फैसला कर लिया. इस प्रकरण में सायना को काफी नुकसान भी उठाना पड़ा. दूसरी ओर सायना खराब फिटनेस से भी जूझ रही थी लेकिन उनकी साथी खिलाड़ी पीवी सिंधु लगातार अपने दमदार खेल की बदौलत भारतीय तिरंगा बुलंद कर रही थी. जानकारों की मानें तो पीवी सिंधु सायना की जगह ले सकती है. सिंधु ने बेहद कम उम्र में कई स्वर्णिम सफलता हासिल कर इस बात का एहसास भी करा दिया कि वह सायना से कम नहीं है. भारत में बैडमिंटन सायना के चलते सुर्खियों में खूब आया लेकिन बाद में सायना सिंधु तक सिमट भी गया. दरअसल इनके बाद खासकर महिला खिलाड़ियों का टोटा देखा जा सकता है. ज्वाला गुट्टा का करियर भी अब ढलान पर है. आज से कुछ साल पहले ज्वाला युगल की सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी के तौर भारतीय चुनौती पेश करती थी लेकिन अब ऐसा नहीं है. उनकी खराब फिटनेस भारतीय खेमों को निराश करने लगा है. बैडमिंटन में अगर फिटनेस जवाब दे दी है तो इतना तो साफ है कि करियर अब खात्मे की ओर बढ़ने लगता है.

बात अगर पुरुष खिलाड़ियों की जाए तो इसमें कोई शक नहीं है कि भारत को अभी अगला गोपीचंद और प्रकाश पादुकन जैसा खिलाड़ी अभी तक नहीं मिल सका लेकिन उम्मीदें श्रीकांत सौरभ जैसे खिलाड़ियों के रूप में परवान चढ़ रही है. दोनों ही विश्व बैडमिंटन पटल पर लगातार दस्तक दे रहे हैं. दोनों ही खिलाड़ियों के हाल के प्रदर्शन भी इस बात के गवाह हैं कि आने वाले दिनों में भारत के लिए कमाल का प्रदर्शन करने में सफल रहेंगे. श्रीकांत लगातर अपने शानदार खेल से भारत का मान बढ़ा रहे हैं. श्रीकांत में अगला गोपीचंद बनने की काबिलियत दिखती है. यह भी एक इत्तेफाक है कि श्रीकांत ने बैडमिंटन के डबल्स में अपना हुनर दिखाना शुरू किया था लेकिन बाद में गोपी की सलाह पर उन्होंने एकल में अपना करियर बनाने की ठानी. साल 2009 में गोपीचंद अकादमी से जुड़ने के बाद श्रीकांत ने पीछे मुड़कर नहीं देखा. इसके बाद जूनियर स्तर पर अपने बैडमिंटन का लोहा मनवाने वाले श्रीकांत ने बड़े स्तर पर भी अपने खेल की धमक दिखानी शुरू कर दी. उन्होंने थाइलैंड ओपन का खिताब जीतकर अपनी प्रतिभा का सही आकलन कराया. इसके बाद उन्होंने चाइना ओपन में लीन डेन को हराकर सनसनी फैला दी. साल 2014 में चाइना ओपन का खिताब जीतकर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी अलग पहचान बनाई. इसके बाद कई और टूर्नामेंट के खिताबी जंग में प्रवेश कर लिया. 2015 के अर्जुन अवॉर्ड के खिताब भी अपने नाम किया. कुल मिलाकर देखा जाए तो भारतीय बैडमिंटन का भविष्य उज्ज्वल कहा जाएगा. यूपी से लेकर हैदराबाद में अब बैडमिंटन को लेकर युवाओं में अलग पहचान दिखती है. भारत में कई बड़ी अकादमी खुल रही है जो भारतीय बैडमिंटन के लिए बेहद अच्छा कहा जा सकता है. गोपीचंद लगातार भारतीय बैडमिंटन को बढ़ाने के लिए कई अच्छे कदम उठा रहे हैं. देखना रोचक होगा कि भारत के पास कई सायना और सिंधु के बाद और कितने खिलाड़ी विश्व बैडमिंटन में अपनी पहचान बनाते हैं. ■

गुजरात बना रणजी का सरताज

रणजी के रण में पहली बार गुजरात ने बेहद शानदार प्रदर्शन करते हुए मुम्बई जैसी मजबूत टीम को पराजित कर अपना पहला खिताब जीता. पार्थिव पटेल की कप्तानी में गुजरात ने रणजी के इतिहास में पहली बार यह खिताब जीता है. गुजरात की टीम के लिए यह बेहद सुखदायी पल है. गुजरात जैसी कमजोर टीम से कप की उम्मीद नहीं की जा रही थी लेकिन टीम के कई खिलाड़ी लगातार घरेलू क्रिकेट में अपने बल्लेबाजी की धमक से विरोधियों के माथे पर बल ला दिया. खासकर टीम के कप्तान पार्थिव पटेल जिनका बल्ला आजकल खूब बोल रहा है. अभी हाल में साहा की जगह मिले मौके को भी उन्होंने खूब भुनाया. इंग्लैंड के खिलाफ उन्होंने अपनी शानदार बल्लेबाजी के बदौलत टीम में अपनी जगह पक्की करने के लिए मजबूत दावा पेश किया. गुजरात की टीम का यह जीत इसलिए अहम है क्योंकि उसने 41 बार के चैम्पियन मुम्बई जैसी बड़ी टीम को पराजित किया है. पार्थिव की सेना ने रणजी ट्रॉफी का खिताब पहली बार जीता है. बतौर कप्तान पार्थिव पटेल ने लगातार घरेलू क्रिकेट में अपनी छाप छोड़ रहे हैं. इससे पूर्व गुजरात की टीम 66 साल पहले फाइनल में पहुंची थी लेकिन वह खिताब जीतने से चूक गई. दोनों ही टीमों की तुलना की जाए तो मुम्बई की टीम खिताब की तगड़ी दावेदार थी लेकिन गुजरात की आंधी के आगे उसकी एक नहीं चली. हालांकि मुम्बई की टीम भी बदलाव के दौर से गुजर रही है. उसके कई बड़े खिलाड़ी संन्यास ले चुके हैं लेकिन मुम्बई के नये सितारे के रूप में अब पृथ्वी शॉ का नाम भी सुर्खियों में आ रहा है. शॉ में सचिन की झलक देखी जा सकती है. देखा जाए तो गुजरात की टीम ने लगातार घरेलू क्रिकेट में चमक बिखेर रही है. 2014-15 के सैयद मुश्ताक अली टी-20 का खिताब भी अपने नाम किया था. इतना ही नहीं, 2015-16 में विजय हजारे का चैम्पियन का गौरव प्राप्त किया जबकि अब वह रणजी का नया चैम्पियन भी बन गया है. यह भी एक इस्तेफाक है कि इन तीनों खिताब में गुजरात टीम की कमान पार्थिव पटेल के हाथों में थी. दूसरी ओर मुम्बई की टीम का घरेलू क्रिकेट में दबदबा देखते ही बनता है. उसने 46वीं बार फाइनल में प्रवेश किया और उसने 41 में खिताबी जीत मिली जबकि पांच बार उसे फाइनल में हार का मुंह देखना पड़ा है. गुजरात को चैम्पियन बनाने में पार्थिव पटेल का

अहम योगदान है. पूरे सीजन उनकी बल्लेबाजी को लेकर चर्चा रही है. खिताबी जंग में उन्होंने बतौर कप्तानी के साथ बल्लेबाजी में खूब नाम कमाया. पहली पारी में 90 रन बनाने वाले पार्थिव ने दूसरी पारी 143 रन बनाकर गुजरात की जीत को पक्की कर दिया. इस खिताबी मुकाबले में मुम्बई ने पहले बल्लेबाजी करते हुए 228 रन का स्कोर ही बना सकी. इसके बाद जवाब में गुजरात की टीम ने 291 रन बनाकर मुम्बई पर दबाव में ला दिया. इसके बाद मुम्बई ने दूसरी पारी में संभल कर बल्लेबाजी करते हुए 411 रन का स्कोर बनाकर गुजरात को 312 रनों का लक्ष्य दिया. इसके बाद गुजरात ने इस लक्ष्य को बेहद सफलतापूर्वक हासिल कर लिया. पार्थिव ने फाइनल ही नहीं सेमीफाइनल में भी बल्लेबाजी में कमाल किया था. कुल मिलाकर देखा जाए तो गुजरात की टीम से अब कई खिलाड़ी भारतीय टीम में दस्तक दे सकते हैं. गुजरात की टीम में यूपी के स्टार खिलाड़ी रह चुके आरपी सिंह ने गुजरात का दामन थामा और वह गुजरात की तरफ से सबसे अनुभवी खिलाड़ियों में शुमार रहे. उनकी गेंदबाजी से गुजरात ने कई बार शानदार प्रदर्शन किया. दरअसल हाल के दिनों में यूपी क्रिकेट से लगातार खिलाड़ी पलायन कर रहे हैं. पहले कैफ और अब आरपी सिंह. आरपी सिंह के लिए गुजरात की टीम के साथ अलग अनुभव रहा और उनके आते ही गुजरात रणजी क्रिकेट का नया चैम्पियन भी बन गया. ■

feedback@chauthiduniya.com

कंगना के फैशन में कुछ ख़ास है

रा ष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित बॉलीवुड अभिनेत्री कंगना रनौत के लाखो-करोड़ो फैन्स हैं. दर्शक उनकी एक्टिंग के तो पहले से ही कायल हैं, लेकिन कंगना को उनके फैशन की अच्छी समझ के लिए भी जाना जाता है. हालांकि, कंगना का कहना है कि उन्हें फैशन में आगे रहने के लिए काफी लंबा समय नहीं लगा.

कंगना ने कहा, मैं युवावस्था से ही अपने लुक को लेकर नए-नए बदलाव करती रही हूं. मैंने एक छोटे कस्बे से अपने सफर की शुरुआत की और मुझे एक फैशन दिग्गज बनने में अधिक समय नहीं लगा. मैं युवावस्था से ही अपने लुक के साथ नए-नए बदलाव करती रही हूं. ऐसा भी नहीं है कि इस फैशन की वजह से मैं अपने गृहनगर में कुछ अलग महसूस करती हूं. इस समय कंगना फिल्म रंगून में व्यस्त हैं. कंगना की आगामी फिल्म रंगून भारत के स्वतंत्रता संघर्ष से पहले 1940 के दौरान की पृष्ठभूमि पर आधारित है. फिल्म में वह शाहिद कपूर और सैफ अली खान के साथ नज़र आएंगी.■

अपने करियर से ख़ुश है यामी

प्रवीण कुमार
feedback@chauthiduniya.com

अ पने करियर की शुरूआत टीवी सीरियल से करने वाली यामी गौतम को बॉलीवुड में पांच साल हो चुके हैं. अपनी ख़ूबसूरती और अभिनय के दम पर यामी बॉलीवुड में सक्रिय हैं और आज उनके लाखों फैन्स दुनिया भर में मौजूद हैं. बॉलीवुड में यामी बेशक अभी टॉप की अभिनेत्रियों में शामिल नहीं हुई हो पर उन्हें बॉलीवुड के बड़े-बड़े अभिनेताओं के साथ काम करने का मौका मिल रहा है और वह तेजी से बॉलीवुड में अपनी पहचान बनाती जा रही हैं. यामी ने हिंदी फिल्म के अलावा अन्य भाषाओं की फिल्मों में भी काम किया है. जिनमें कन्नड़, पंजाबी, तेलगू, मलयालम और तमिल फिल्में शामिल हैं.

यामी ने बॉलीवुड में शुरुआत आयुष्मान खुराना के साथ फिल्म विक्की डोनर से की थी. फिल्म हिट रही और इसके बाद यामी ने टोटल सियापा, एक्शन-जैक्शन, बदलापुर, सनम रे, जूनूनियत जैसी फिल्मों में काम किया. इस साल वह ऋतिक रोशन के साथ फिल्म काबिल में नज़र आ रही है.

यामी बताती है कि वह खुद को इंड्रस्टी में अब आउटसाइडर नहीं मानती. यामी का कहना है कि मैं मानती हूं कि यहां मैं नई हूं लेकिन फिर भी मैं खुद को आउटसाइडर नहीं समझती. यामी ने आगे यह भी कहा कि मैं जहां से आई हूं वहां से यहां तक पहुंचने पर काफी खुश हूं. मेरा मानना है कि सबसे पहले आपको ये देखना चाहिए कि आप करना क्या चाहते हैं. धीरे-धारे जो फिल्में मुझे मिल रही हैं वो मेरे लिए काफी मददगार हैं.

आपको बता दें कि यामी ने काबिल फिल्म में एक नेत्रहीन का किरदार निभाया है. फिल्म में ऋतिक रोशन भी नेत्रहीन हैं. ये फिल्म 25 जनवरी को रिलीज़ हो चुकी है जो शाहरुख खान की फिल्म रईस से क्लैश करती है. देखना ये है कि कौन सी फिल्म बाज़ी मारेगी.■

विजय कृष्ण आचार्य के निर्देशन में बन रही इस फ़िल्म की लीड स्टार कास्ट में आमिर ख़ान और अमिताभ बच्चन हैं. लेकिन अभी लीडिंग लेडी फ़ाइनल नहीं हुई है. ख़बरों में कई नाम तैर रहे हैं, मगर अब कहा जा रहा है कि करीना इस रोल को पाने के बेहद क़रीब हैं.

हिंदोस्तान को ठग सकते हैं आमिर- करीना !

क रीना कपूर 2017 की सबसे बड़ी ख़बर देने वाली हैं. बॉलीवुड में चर्चा गर्म है कि बेबो-आमिर ख़ान की जोड़ी *3 ईडियट्स* और *तलाश* के बाद एक बार फिर दिखने को मिल सकती है. जी हां, आमिर और बेबो की ये जोड़ी एक बार फिर धमाल कर सकती है. सूत्रों की माने तो करीना कपूर आमिर खान के साथ फ़िल्म *ठग्स ऑफ़ हिंदोस्तान* में नज़र आ सकती है.

विजय कृष्ण आचार्य के निर्देशन में बन रही इस फ़िल्म की लीड स्टार कास्ट में आमिर ख़ान और अमिताभ बच्चन हैं. लेकिन अभी लीडिंग लेडी फ़ाइनल नहीं हुई है. ख़बरों में कई नाम तैर रहे हैं, मगर अब कहा जा रहा है कि करीना इस रोल को पाने के बेहद क़रीब हैं. सूत्र बताते हैं कि करीना से ज़ोर-शोर से बात चल रही है और उन्हें इस प्रोजेक्ट में शामिल करने के लिए पूरी कोशिश की जा रही है. *ठग्स ऑफ़ हिंदोस्तान* पीरियड फ़िल्म है, जिसमें आमिर के साथ पहली बार अमिताभ बच्चन स्क्रीन स्पेस शेयर कर रहे हैं.

अगर करीना इस फ़िल्म के लिए हां बोल देती हैं तो आमिर के साथ उनकी ये तीसरी फ़िल्म होगी. करीना और आमिर पहली बार *3 ईडियट्स* में साथ आए थे. दोनों *तलाश* में भी साथ दिखाई दिए. हालांकि उस फ़िल्म में करीना आमिर की लीडिंग लेडी नहीं थीं.

वहीं *ठग्स ऑफ़ हिंदोस्तान* के डायरेक्टर विजय कृष्ण आचार्य के साथ करीना *टशन* में काम कर चुकी हैं. इस फ़िल्म के लिए बेबो ने साइज़ ज़ीरो बनाकर सनसनी मचा दी थी. करीना फरवरी में एक फ़ैशन शो में शो-स्टॉपर बनकर काम पर लौट रही हैं. उनके पास फिलहाल *वीरे दी वेडिंग* है, जिसमें करीना सोनम कपूर के साथ लीड रोल में नज़र आएंगी.

फ़िल्म के लिए आमिर ख़ान ने तैयारियां भी शुरू कर दी हैं. *दंगल* की शूटिंग ख़त्म होने के साथ ही आमिर ने इस फ़िल्म के लिए लुक टेस्ट शुरू कर दिए थे. एक लुक *दंगल* की प्रमोशनल इवेंट्स में भी दिखाई दिया था.■

फ्लैश-बैक

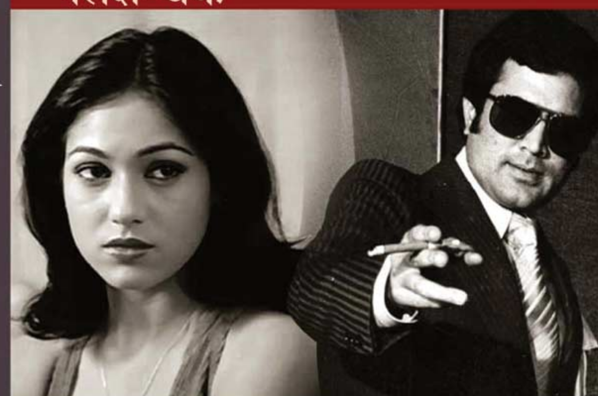

टीना मुनीम की ख़ूबसूरती के दीवाने थे राजेश खन्ना

टीना मुनीम की बॉलीवुड में नई-नई एंट्री हुई थी. राजेश खन्ना की डिंपल कपाड़िया से शादी होने के बावजूद टीना मुनीम को अपने करीब आने दिया, टीना जानती थी कि राजेश शादीशुदा हैं, पर टीना भी राजेश खन्ना के स्टारडम की दीवानी थीं और राजेश खन्ना टीना मुनीम की ख़ूबसूरती के.

हिं दी सिनेमा के पहले सुपरस्टार थे राजेश खन्ना के लिए लड़किया पागल थीं. कहा यह भी जाता है के उस समय लड़कियां राजेश खन्ना का फोटो अपनी तकिये के नीचे रख कर सोया करती थीं. एक समय राजेश खन्ना भी यह मान बैठे थे की उनकी इमेज किसी लवरबॉय से कम नहीं. राजेश खन्ना के लिए लड़कियों की दीवानगी, सिर्फ उनके फैन्स तक सिमित नहीं थी बल्कि बॉलीवुड में भी एक्ट्रेस उन पर जान छिड़कती थीं. राजेश खन्ना की यही अदा थी कि जब उन्होंने डिंपल कपाड़िया के पिता से उनका हाथ मांगा, तब ना ही डिंपल कपाड़िया के पिता चुन्नी लाल कपाड़िया मना कर पाए और न ही डिंपल, कहा तो यह भी जाता है कि डिंपल का उन दिनों ऋषि कपूर से अफेयर था, पर जब ऋषि को पता चला कि राजेश खन्ना डिंपल को लेकर ज्यादा सीरियस हैं, तो वह बीच से हट गए.

तभी उन दिनों टीना मुनीम की बॉलीवुड में नई-नई एंट्री हुई थी. राजेश खन्ना की डिंपल कपाड़िया से शादी होने के बावजूद टीना मुनीम को अपने करीब आने दिया, टीना जानती थीं कि राजेश खन्ना शादीशुदा हैं, पर टीना भी राजेश खन्ना के स्टारडम की दीवानी थी और राजेश खन्ना टीना मुनीम की ख़ूबसूरती के.

जब इन दोनों का अफेयर परवान चढ़ा तब टीना मुनीम ने राजेश खन्ना पर उनसे शादी का दवाब बनाना शुरू किया, राजेश खन्ना ने उन्हें इस बात का आश्वासन दिया कि वह जल्द ही डिंपल कपाड़िया को तलाक देकर उनसे शादी कर लेंगे. पर राजेश खन्ना ने कभी भी डिंपल कपाड़िया से तलाक का ज़िक्र तक नहीं किया.

टीना को यह साफ़ तौर पर दिखाई देने लगा था कि राजेश खन्ना उन्हें लेकर सीरियस नहीं हैं, ना ही दोनों के रिश्ते को लेकर. उस वक्त टीना ने एक बड़ा फैसला लेते हुए राजेश खन्ना से दूरी बना ली और इस रिश्ते को उसी समय ख़त्म कर दिया. उस समय राजेश खन्ना टीना मुनीम के सामने बहुत गिड़गिड़ाए और टीना से कहा कि वह उन्हें छोड़ कर ना जाए, पर टीना उन्हें छोड़ने का मन बना चुकी थी. आज टीना मुनीम भारत के सबसे बड़े उद्योगपति अनिल अम्बानी की पत्नी है.

पहली नज़र में टीना को दिल दे बैठे थे अनिल अंबानी

रि लायंस ग्रुप के फाउंडर धीरूभाई अंबानी के छोटे बेटे अनिल अंबानी की लव स्टोरी किसी फ़िल्मी कहानी से कम नहीं है. अनिल ने अपने जमाने की फेमस बॉलीवुड एक्ट्रेस के साथ लव मैरिज की है. 1986 में टीना मुनीम की बिजनेस टायकून अनिल अंबानी से पहली मुलाकात हुई थी. इनकी प्रेम कहानी कई मोड़ से होकर गुजरी. रिपोर्ट्स के मुताबिक अनिल ने एक मैरिज फंक्शन में पहली बार टीना को देखा था. टीना ब्लैक ड्रेस में पहुंची थीं, जो अनिल को ख़ासी पसंद आई. इस मुलाकात का जरिया टीना का भतीजा करन बना था. उस दौर में टीना बॉलीवुड की बड़ी स्टार थीं.

टीना ने अनिल से पहली मुलाकात के समय तक रिलायंस के बारे में कुछ भी नहीं सुना था. हालांकि, टीना का कहना है कि पहली मुलाकात में अनिल उन्हें काफी पसंद आए थे. अनिल ने जब टीना के बारे में अपने परिवार को बताया तो वे इस रिश्ते के खिलाफ थे. वे नहीं चाहते थे कि कोई एक्ट्रेस उनके घर की बहू बने. फैमिली प्रेशर के चलते अनिल ने टीना से दूर होने का फैसला लिया. लेकिन इस प्रेम कहानी का क्लाइमैक्स यह नहीं था. 1989 में अमेरिका के लॉस एंजिल्स में बड़ा भूकंप आया था. उस वक्त टीना वहीं थीं. अनिल ने किसी तरह नंबर खोजकर टीना को फोन किया.

फोन पर अनिल ने केवल टीना से पूछा क्या तुम ठीक हो? टीना का जवाब मिलते ही कोई और बात किए बगैर अनिल ने फोन काट दिया. अनिल के इस बर्ताव से टीना हैरान हो गईं. टीना से भी रहा नहीं गया और दोनों केबीच फिर बातचीत शुरू हो गई. टीना और अनिल के बीच हुई मुलाकातों में अक्सर दोनों अपनी लोकल भाषा गुजराती में ही बात करते थे. बाद में परिवार की सहमति के बाद 1991 में अनिल और टीना की शादी हो गई.■

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com